Con. 3. IX-6-49
320

अंक 9
संख्या 6

शुक्रवार
5 अगस्त
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप—(जारी)

[अनुच्छेद 294 से 253 पर विचार 313–366

भारतीय संविधान सभा

शुक्रवार, 5 अगस्त सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 9 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में हुई।

संविधान का प्रारूप—*(जारी)*

अनुच्छेद 249—*(जारी)*

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 249 पर बहस जारी करते हैं जिस पर कल यहां विचार किया जा रहा था।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): सभा इस समय विचार कर रही है, श्रीमान्, भाग 10 के अध्याय 1 पर जिसमें संघ तथा राज्यों के बीच राजस्व विभाजन की व्यवस्था दी हुई है। 249 से 260 तक के अनुच्छेदों में संघ तथा प्रान्तों द्वारा करों के संग्रहीत किये जाने और संघ तथा प्रान्तों को सौंपे जाने की व्यवस्था दी हुई हैं। अनुच्छेद 255 में सहायक अनुदानों के सम्बन्ध में अव्यवस्था है जिन्हें संघ राज्यों को देगा तथा अनुच्छेद 260 में वित्तयोग की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है, ताकि केन्द्रीय शासन के वित्त विभाग के बिना किसी हस्तक्षेप के प्रान्तों को स्वतंत्र रूप से अनुदान दिये जा सकें।

सभा को, श्रीमान् पहले कभी इस विषय पर विचार करने का अवसर नहीं मिला था और यह विषय ऐसा है जिसका समस्त भारत की जनता के सामाजिक कल्याण से सम्बन्ध है। सन् 1947 की जुलाई में संघ-संविधान-समिति (Union Constitution Committee) के अध्यक्ष से पं. जवाहरलाल नेहरू ने वित्तों और उधार ग्रहण सम्बन्धी शक्तियों पर प्रतिवेदन के रूप में एक छोटा सा अध्याय (भाग 7) पेश किया था, जिसपर बाद में सभा ने विचार किया था और प्रतिवेदन में उसे शामिल किया था। सन् 1947 के जुलाई-अगस्त वाले अधिवेशन में इस प्रश्न पर पूर्णतः विचार नहीं हुआ और मामला अस्पष्ट ही छोड़ दिया गया। किन्तु आपने, श्रीमान्, इस सम्बन्ध में कम से कम इतना अवश्य किया कि संघ-संविधान के वित्तीय प्रावधानों के प्रश्न पर विचार करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त कर दी। उस समिति ने सन् 1948 के आरम्भिक काल में अपनी रिपोर्ट पेश की। पर इस सर्वसत्ताधारी सभा ने उस समिति की रिपोर्ट पर यहां कभी भी विचार नहीं किया। मसौदा-समिति ने अवश्य ही उसकी रिपोर्ट पर विचार किया होगा और तदनुसार विचाराधीन अनुच्छेदों में उसने संशोधन भी किया होगा। मैं यह जरूर कहूंगा, श्रीमान् कि प्रस्तुत अनुच्छेद मुझे भारत-शासन-अधिनियम 1935 की उन कतिपय धाराओं का स्मरण दिला देते हैं, जो बिल्कुल इसी तरह की है। इन अनुच्छेदों से यह नहीं प्रकट होता है कि केन्द्रीय शासन का वित्त-विभाग, उन साधनों को

*इस संकेत का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री बी. दास]

जिन पर कि उसने मनमाने ढंग पर अधिकार कर रखा है, किसी भी तरह प्रान्तों को देने के लिये तैयार है, ताकि वे सुख और समृद्धि का जीवन बिता सकें और अपने अधीनस्थ निवासियों के प्रति अपने कर्त्तव्यों का समुचित रूप से पालन कर सकें। उक्त विशेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट के पैरा 27 और 28 में प्रान्तों तथा केन्द्र की आवश्यकताओं के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है। उसने कहा है:—

> "उसके प्रतिकूल प्रान्तों की आवश्यकताओं और विशेषकर के कल्याणसाधक सेवाओं तथा सर्वांगीण विकास से सम्बन्ध वाली आवश्यकतायें असीम हैं। मानव कल्याण की समुन्नति तथा देश की उत्पादन शक्ति की वृद्धि बहुत कुछ इन्हीं सेवाओं पर निर्भर करती है। अगर इन सेवाओं को एक समुचित योजना के आधार पर चलाना है तो इसके लिये आवश्यक है कि प्रान्तीय सरकारों की मरजी पर एक पर्याप्त धनराशि रख दी जाये, जिसे वह अपना समझ सके ताकि उन्हें केन्द्र की अनिश्चित दानशीलता और समृद्धि पर न निर्भर करना पड़े।"

मैं सन् 1925 से ही भारत सरकार के वित्त विभाग की गतिविधि को देखता आ रहा हूं। इसने सदा अपना यही रुख रखा है मानो प्रान्तों को वह दान के रूप में कुछ दे रहा हो। इनका ख्याल यह है कि भारत की रक्षा ही उनकी प्रमुख जिम्मेदारी है। स्वराज्य प्राप्ति के बाद भी यहां के असंख्य नर नारियों के प्रति आर्थिक एवं सामाजिक न्याय हो, इसे वह अपनी जिम्मेदारी नहीं समझते हैं। उक्त विशेषज्ञ समिति की नियुक्ति, श्रीमान्, आपने सभा की इच्छा के अनुसार ही की थी, ताकि उसकी सिफारिशों को कार्यान्वित किया जा सके। पर अपने वर्तमान विभाग का रुख क्या आप देख रहे हैं? वह आज भी अपने पुराने औपनिवेशिक ढंग के व्ययों को स्वच्छन्दतापूर्वक चला रहा है और वह इसका भी अनुभव नहीं करता है कि भारतीय जनता के प्रति उसके प्रारम्भिक कर्तव्य क्या हैं। वह भारत के राजस्व में से कोई अंश प्रान्तों को नहीं देता है जिसे पाकर वह देशवासियों के सामाजिक एवं आर्थिक कल्याण की अभिवृद्धि कर सके मुझे प्रसन्नता होती, श्रीमान्, अगर मसौदा-समिति ने 249 से 260 तक के अनुच्छेदों में उक्त विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों को भी स्थान दिया होता। मैं देख रहा हूं, श्रीमान्, कि भारत सरकार के वित्त-विभाग का सन् 1925 से बराबर यही रुख रहा है। आखिर यह वित्त-विभाग इतना हृदय शून्य क्यों है? हम भले ही यह समझते हों कि अब देश स्वतन्त्र हो गया है और अब हम एक स्वाधीन राष्ट्र हैं पर भारत सरकार का वित्त विभाग अब भी वहीं है जहां 1925 और 1935 में था। आज तो शायद यह विभाग विदेशी शासन के जमाने से भी ज्यादा अपने को अधिकार सम्पन्न समझता है और देश के असंख्य निवासियों के प्रति जिस कर्त्तव्य का इसे पालन करना है उसको सोचता भी नहीं है। अपने संविधान की प्रस्तावना में हम यह कह रहे हैं। कि देशवासियों को सामाजिक तथा आर्थिक न्याय प्राप्त करावेंगे। देशवासियों को राजनैतिक न्याय प्राप्त हो इसके बारे में तो सभा ने यहां हजारों वक्तृतायें सुनी हैं पर गत ढाई वर्ष की अवधि में देश के असंख्य निवासियों को, जो कि विभिन्न प्रान्तों में रहते हैं आर्थिक न्याय प्राप्त कराने के बारे में भी सभा ने कभी कोई बात यहां सुनी है। सभा ने तो एक विशेषज्ञ समिति की नियुक्ति की, श्रीमान्, पर आखिर यह बात क्यों है कि भारत सरकार ने एक भी ऐसा

प्रस्ताव नहीं रखा जिसके द्वारा प्रान्तों को देश के राजस्व में से कुछ अंश मिल सके, जिसे वह जनता, की अनुन्नत अवस्था को समुन्नत करने में और उनकी सामाजिक भलाई में खर्च कर सकते? विधेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ 13 तथा 14 पर सिफारिश की है कि राजस्व के आगमों को प्रान्तों में विभाजित कर दिया जाये। पर सर आटो नेमर के निर्णय के पीछे जो सिद्धान्त था उसी को अब भी जारी रखने का प्रयास किया जा रहा है। सर आटो नेमर तो यहां इसलिये आये थे कि अंग्रेजों का शासन यहां स्थायी रूप से बना रहे। यह देखना कि प्रान्त समुन्नत हों और वहां के लोग खुशहाल और सन्तुष्ट रहें, न सर ओटो नेमर का कर्त्तव्य था और उनके लिये यह जरूरी ही था। किन्तु आश्चर्य है कि भारत सरकार आज स्वराज्य प्राप्ति के दो वर्ष बाद भी यही कोशिश कर रही है कि सर ओटो नेमर के निर्णय के आधार पर ही व्यवस्था चालू रहे हैं। मुझे खुशी होती अगर विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट के पैरा 50 और 58 में दी हुई सिफारिशों को किंचित संशोधन के साथ संविधान में लिपिबद्ध कर दिया जाता। अर्थ-मन्त्री को इस समय मैं यहां उपस्थित नहीं पा रहा हूं। माननीय मित्र डॉ. जान मथाई इस सभा के एक सदस्य हैं। उनकी यह जिम्मेदारी है, उनका यह कर्तव्य है कि यहां आकर यह बतावें कि क्यों उनकी सरकार गत दो वर्षों से प्रान्तों को कोई साहाय्य नहीं प्रदान कर रही है। माननीय अर्थ-मंत्री यहां उपस्थित नहीं हैं पर आशा करता हूं कि भारत सरकार का दूसरा कोई सदस्य जो इस सभा का भी सदस्य होगा, यहां आकर यह बतायेगा कि भारत सरकार का वित्त-विभाग यह आनाकानी और द्वविधा की नीति क्यों बरत रहा है। आपके द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ समिति ने—श्रीमान्, जो सिफारिशें की हैं वह एकमत से की हैं और उनकी सिफारिश एक हैं। भारत सरकार ने उसकी कोई सिफारिश नहीं मंजूर की है और न उसके किसी वक्ता ने यहां यही बतलाया है कि क्यों भारत सरकार उसकी सिफारिशों के प्रति इतना उपेक्षा भाव रखती है। आखिर उस विशेषज्ञ समिति को आपने नियुक्त किया था और इस सभा की राय से नियुक्त किया था। इस समिति की रिपोर्ट के पैरा 71 में यह कहा गया है:-

> "समय को बचाने के लिये हम एक और सिफारिश करेंगे कि संविधान के प्रयोग में आने से पहले वित्तायोग स्थापित कर दिया जाये और संविधान के प्रवर्त्तन में आ जाने के बाद और इसकी स्थिति नियमनानुसार निश्चित कर दी जाये।"

अनुच्छेद 260 में यह कहा गया है कि:-

> "इस संविधान के प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात् प्रत्येक पंचम वर्ष की समाप्ति पर अथवा ऐसे अन्य समय पर, जिसे राष्ट्रपति आवश्यक समझे, वह आदेश द्वारा एक वित्तायोग संघटित करेगा जिसका.....इत्यादि इत्यादि"

मैं पूछता हूं कि इस वित्तायोग की और इस संविधान की उपयोगिता ही क्या है, जब भारत सरकार का वित्त-विभाग अपनी वही पूर्व की स्वेच्छाचारिता बरतता

[श्री बी. दास]

है और भारत के राजस्व का अधिकांश भाग तथाकथित भारतीय रक्षा के प्रश्न पर और भारत सरकार के भीमसंख्यक कर्मचारी वर्ग पर व्यय कर डालता है? भारत सरकार के कर्मचारी वर्ग की संख्या घटाकर आधी या आधी से भी कम की जा सकती है। भारत सरकार की आज आर्थिक अवस्था क्या है? आमदनी से ज्यादा उसका खर्च है। फिर भी वित्त-विभाग जैसे चाहता है स्वच्छन्दता से राजस्व का व्यय करता है और संविधान द्वारा शासन पर यह जो दायित्व आरोपित किया गया है कि वह जनता के प्रति सामाजिक एवं आर्थिक न्याय करेगा, उसका उसे रंचमात्र भी ख्याल नहीं है। भारत सरकार पर यह एक दोषारोप है, श्रीमान्, और उसे यहां सभा-भवन में यह बताकर कि क्योंकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी इन दो वर्षों के अन्दर उसने जनता के प्रति सामाजिक एवं आर्थिक न्याय नहीं किया, अपनी स्थिति को साफ कर देना चाहिये। यह कहना बेकार है कि संविधान प्रवर्तन में आयेगा 26 जनवरी 1950 को और उसके बाद वित्त-विभाग उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई योजना तैयार करके उसे इस सभा के समक्ष रखेगा। वित्त-विभाग का यह रुख सही नहीं है। वित्त-विभाग आवश्यकता से अधिक शक्ति सम्पन्न हो गया है। पहले कुल 6 या 7 विभाग थे, पर आज हुकूमत में 19 मंत्री हैं और प्रत्येक मिनिस्ट्री एक स्वतन्त्र निकाय बन गया है और हर मिनिस्ट्री जैसे चाहती है प्रकार्य करती है और खर्च करती है। आखिर ये वित्त-प्राधिकारी कौन लोग हैं? ये वही लोग हैं जो 1925 में सर बेसिल ब्लैबिट के मातहत कार्य करते थे और 1936-1937 में सर जेम्स क्रेस के मातहत काम करते थे जिनकी परम्परागत मनोवृत्ति यही रही है कि अपनी स्थिति किसी तरह समुक्त हो। ऐसे ही तो लोग हैं जो आज भारत सरकार के वित्तीय मामलों का संचालन कर रहे हैं। ये लोग कट्टर निरंकुश और नौकरशाही प्रणाली के कट्टर भक्त हैं। इनमें से कोई भी अगर लोकतंत्रीय भावना वाला व्यक्ति हो तो मैं उनके आगे सर झुकाऊंगा। मैं जानता हूं लोकतन्त्रीय भावना इनमें किसी में भी नहीं है। अगर इनमें लोकतंत्रीय भावना होती, तो इन दो वर्षों में इन्होंने अपने कार्यों द्वारा इसे व्यक्त कर दिया होता। मैं तो यह कहूंगा, श्रीमान्, कि उन्होंने संविधान की अवहेलना की है। अपने स्वतंत्र संविधान के पीछे जो भावना है, उसे ये समझ नहीं पाये हैं और ये लोक इसी तरह निरंकुश रूप में चलते रहेंगे जब तक कि हम बिल्कुल गिर न जायें।

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य की वक्तृता में मैं बाधा पहुंचाना नहीं चाहता। पर मेरा कहना यह है कि यहां हम संविधान के एक विशेष अनुच्छेद पर विचार कर रहे हैं।

***श्री बी. दासः** हां, श्रीमान्।

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद में उन शुल्कों के सम्बन्ध में व्यवस्था की गई है जिनको आरोपित करेगा संघ, पर जिनका संग्रह और समायोजन राज्यों द्वारा किया जायेगा। मैं नहीं समझता कि इस अनुच्छेद पर विचार करने में सरकार की नीति की आलोचना कैसे प्रासंगिक हो सकती है। इसलिये मेरा कहना यह है कि माननीय सदस्य को यहां इस अनुच्छेद के गुण-दोष तक ही अपना भाषण सीमित रखना

चाहिये। भारत सरकार की नीति की आलोचना करने की यहां गुंजाइश नहीं है। उसके लिये तो अन्यत्र स्थान है जहां वे अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं।

***श्री बी. दास:** आपके निर्णय को नतमस्तक होकर स्वीकार करता हूं, श्रीमान्। इस संविधान के मुख्य तीन पहलू हैं जिनको ध्यान में रखकर उसकी रचना की गई है। एक तो राजनीतिक, दूसरा सामाजिक और तीसरा आर्थिक पहलू। आर्थिक न्याय की आधारशिला ही इस बात पर निर्भर करती है कि संघ तथा प्रान्तों के बीच वित्त का समुचित विभाजन किया जाये। हमें इस विषय पर कल ही जब कि यहां अनुच्छेद 247 पर विचार शुरू किया था बहस शुरू करनी थी। पर अनुच्छेद 247 पर मैं इसलिये बोलना नहीं चाहता था कि उसमें 'वित्तायोग' तथा ऐसी ही अन्य पद संहतियों के निर्वचन के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया है। मैं आपके निर्णय के आगे सर झुकाता हूं, श्रीमान्, पर मेरा कहना यह हैं कि 247 में और तदनुवर्ती अनुच्छेदों में इस बात की व्यवस्था दी हुई है कि राजस्व तथा करों का संग्रह एवं विभाजन प्रान्तों और संघ द्वारा किस तरह किया जायेगा। अनुच्छेद 249 में संघ सरकार द्वारा आद्योपित पर राज्यों द्वारा संग्रहीत एवं नियोजित करों के ही सम्बन्ध में व्यवस्था दी हुई है। इसमें विशेषज्ञ समिति की सिफारिश के केवल एक अंश को स्थान दिया गया है। समिति की तो सिफारिश यह भी थी कि प्रान्तों तथा संघ के बीच कर-साधनों का विभाजन भी अतिशीघ्र कर दिया जाये। ऐसी हालत में, श्रीमान्, क्या मेरा पूछना जायज़ नहीं है कि समिति की इन सिफारिशों को संविधान में क्यों नहीं स्थान दिया गया है और क्यों भारत सरकार का एक प्रतिनिधि यहां सामने आकर हमें नहीं बतलाता है। विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों के उन अंशों को जिनका कि मैंने यहां उल्लेख किया है सरकार ने स्वीकार किया है या नहीं और प्रान्तों को सरकार क्या सहायता देना चाहती है? भारत सरकार के अर्थ-विभाग के सम्बन्ध में मैंने कुछ कड़ी बात जरूर कही हैं पर वह इसीलिये कि मैं भारत के आर्थिक ढांचे की खराबियों को जानता हूं।

आशा करता हूं, श्रीमान्, कि भारत सरकार का वित्त विभाग प्रान्तों के साथ भिखमंगों का सा बर्ताव न करेगा। कुछ ऐसा हो गया है कि प्रान्तों को अपना भिक्षा पात्र लेकर वित्त विभाग के पास पहुंचना पड़ता है। चाहे खाद्य आयोग के सम्बन्ध से हो या बंगाल के 1946 के दुर्भिक्ष का ही मसला क्यों न हो, कोई भी भीख के रूप में कुछ नहीं लेना चाहता है। जनता की जो वाजिब मांग है उसे हम केन्द्र के आगे रख रहे हैं। अब तक तो केन्द्रीय शासन एक स्वेच्छाचारी शासन था और ब्रिटिश अमलदारी को बनाये रखने के लिये ही वह अस्तित्व में था, पर उसे अब अतीतकालीन मनोवृत्ति का परित्याग करके प्रान्तों को वह आय-साधन दे देने चाहिये जो कि वस्तुत: उनके हैं। इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं मांगता हूं। विशेषज्ञ समिति की सिफारिशें आपके सामने हैं। भारत सरकार के प्रवक्ता को यहां आकर यह अब कह देना चाहिये कि उसने इन सिफारिशों को पूर्णत: या कुछ संशोधन के साथ मंजूर कर लिया है। ऐसा होने से प्रान्तों को कुछ साहाय्य मिल जायेगा। हम इस बात की ओर आशा लगाये बैठे हैं कि प्रान्तों की समुन्नति होगी, जनता के स्वास्थ्य का स्तर और ऊंचा उठेगा। मैंने समाचार पत्रों मे पढ़ा है कि हमारे स्वास्थ्य मंत्री के पास कुछ लोग पहुंचे थे और मंत्री ने अपनी यह इच्छा व्यक्त की है कि दिल्ली में बने बनाये मकानों के कुछ अस्पताल स्थापित किये जायें। प्रान्तों के पास अपने अस्पताल बनाने के लिए एक लाख की भी रकम नहीं है। उड़ीसा, आसाम जैसे अनुनत्त प्रान्तों में—मैं बिहार को भी यहां शामिल

[श्री बी. दास]

करूंगा—अस्पतालों में बहुत ही कम रोगियों के रखने का सामान है। पर केन्द्र अपने लिये मनमाना जो चाहता है करता है। दिल्ली के लिये बने बनाये मकानों के अस्पताल स्थापित करने की बातें वह कर रहा है जिसमें करोड़ों का खर्च होगा। मैं पूछता हूं क्या इसी तरह प्रान्तों को समुन्नत बनाया जायेगा?

आगे चलकर मैं बहस-मुबाहिसे में फिर भाग लूंगा जब सभा में अनुच्छेद 254 पर विचार किया जायेगा जिसमें पटसन पर करारोपण की व्यवस्था है और जब यहां अनुच्छेद 260 पर विचार किया जायेगा जिसके अनुसार संविधान के प्रारम्भण के पांच के बाद वित्तायोग की नियुक्ति होगी। प्रस्तुत अनुच्छेदों का मसौदा बड़ी ही हृदयहीनता के साथ तैयार किया गया है। इसमें रचयिताओं ने ईमानदारी का परिचय नहीं दिया है। क्या वित्त विभाग अपनी सरकार की यही लोकतन्त्रीय भावना रखता है जो वह कदम-कदम पर प्रान्तों की समुन्नति के मार्ग में रोड़े अटकाता है और देश के वित्त पर अपना ही कब्जा जमाये रहना चाहता है ताकि वह जिस तरह चाहें उसे खर्च करें।? इस बात को व्यक्त करके मैं किसी रहस्य पर नहीं प्रकाश डाल रहा हूं कि 1946 में भारत सरकार ने यह निर्णय किया था कि सैन्य व्यय को घटाकर एक सौ करोड़ कर दिया जाये। हम जानते हैं कि आज देश का विभाजन हो जाने के बाद भी हमारा सैन्य व्यय 150 करोड़ है। मैं कोई कारण नहीं देखता कि क्यों भारत सरकार प्रान्तों की सम्पत्ति को छीन कर मनमानें ढंग से उसे खर्च करे? इस स्वतन्त्र संविधान की रचना करने वाली यह सर्वसत्ताधारी सभा भारत सरकार के अर्थ विभाग को कदापि यह न करने देगी कि देश के आय साधनों के साथ वह जिस तरह चाहे खिलवाड़ करे और प्रान्तों को भूखा मारे। प्रान्तों की ओर से और खासकर के बंगाल, बिहार, आसाम और उड़ीसा की ओर से इस महिमाशालिनी सभा के समक्ष में इसका आग्रह करूंगा कि अनुन्नत प्रान्तों के प्रति वह न्याय करे, मैं इस बात का आग्रह करता हूं कि वित्त विभाग का जो यह रुख है कि जल्दीबाजी में द्रुतगति से हमें कोई कार्रवाई न करनी चाहिये, उसकी यहां तीव्र निन्दा होनी चाहिये और इस सभा को विशेषज्ञ-समिति की सिफारिशों को स्वीकार करना चाहिये जिसमें सदस्य थे श्री नलिनीनंजन सरकार, श्री बी.एस. सुन्दरम् और श्री एम.वी. रंगाचारी जैसे कुशल अर्थविद् लोग। श्री एम. वी. रंगाचारी आज भी भारत सरकार के वित्त विभाग में डिप्टी सेक्रेटरी के पद पर पर हैं। फिर इस विभाग ने उक्त समिति की सिफारिशों का कैसे अतिक्रमण किया? मैं सभा से इस बात का आग्रह करूंगा कि भारत के असंख्य नर-नारियों के प्रति वह न्याय करे, असहाय प्रान्तों के साथ वह न्याय करे और उनको जो समुचित रूप से मिलना चाहिये वह उन्हें दे।

***अध्यक्षः** और कोई भी बोलना चाहता है? *(कोई सदस्य नहीं उठा)* आप कुछ कहना चाहते हैं, डॉ. अम्बेडकर?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बम्बई : जनरल): कोई ऐसी बात नहीं है की कही जाये।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है:–

"कि अनुच्छेद 249 के खण्ड (3) को हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:–

"कि अनुच्छेद 249 के खण्ड (1) में 'such stamp duties' शब्दों के आगे 'as are imposed under any law made by Parliament' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:–

"कि अनुच्छेद 249 के खण्ड (2) में 'revenues of India' शब्दों के आगे 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:–

"कि अनुच्छेद 249 को, उसके संशोधित रूप में, संविधान का अंग समझा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 249 संशोधित रूप में संविधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 250

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है: "कि अनुच्छेद 250 संविधान का अंग माना जाये।"

(संशोधन नं. 2842 से 2850 पेश नहीं किये गये।)

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): मेरा प्रस्ताव यह है, श्रीमान्:

"कि अनुच्छेद 250 के अन्त में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जायें:

'The net proceeds of said distribution shall be assigned by the States to the local authorities in the jurisdiction.' "

(उक्त विभाजन की कुल रकम, राज्यों द्वारा तत्क्षेत्रान्तवर्ती स्थानीय प्राधिकारियों को सौंप दी जायेगी।)

इस संशोधन पर मेरा दूसरा संशोधन भी है जिसका नं. है 201। मैं इसे भी पेश करूंगा, श्रीमान्।

***अध्यक्ष:** पर उसका भी तो वही प्रभाव होगा जो पहले संशोधन का है।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं दूसरे हिस्से को पेश करना चाहता हूं। वह यों है:

"कि संशोधन-सूची के संशोधन नं. 2841 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 250 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जाये:–

'Provided that the proceeds collected by the Government of India under clause (c) shall be assigned to local authorities in the jurisdiction of the States.' "

[पर खण्ड (ग) के अधीन भारत शासन द्वारा संग्रहीत आय, राज्यों के क्षेत्रान्तर्वर्ती स्थानीय प्राधिकारियों को सौंप दी जायेगी।]

यह अनुच्छेद, श्रीमान्, कमोबेशी भारत-शासन-अधिनियम की धारा 137 से लिया गया है। अनुच्छेद में चार तरह के करों के संग्रह का उल्लेख किया गया है। एक तो वह जो सम्पत्ति के उत्तराधिकार पर आरोपित किया जायेगा। दूसरा भूसम्पत्ति-कर, तीसरा सीमा-कर और चौथा रेल द्वारा वाहित मनुष्यों तथा वस्तुओं के भाड़े पर कर। मेरा संशोधन यह है कि खण्ड (ग) के अधीन भारत सरकार द्वारा संग्रहीत कर राज्यों के क्षेत्रान्तर्वर्ती स्थानीय प्राधिकारियों को सौंप दिये जायें।

इस संशोधन को रखने में मेरा उद्देश्य यह है। स्थानीय निकायों के राजस्व सम्बन्धी आय के प्रधान साधन हैं मार्ग-कर, चुंगी-कर तथा सीमा-कर। भारत-शासन-अधिनियम 1935 के प्रवर्त्तन में आने के पहले ये सीमा-कर प्रान्तों के अधिकार में थे। पर उक्त अधिनियम 1935 में उन्हें केन्द्रीय सूची में रख दिया गया। जब तक केन्द्र सीमा-कर आरोपित करने पर राजी न हो, प्रान्तीय सरकार और किसी मद पर सीमा-कर नहीं लगा सकती है जिससे स्थानीय निकाय बड़ी कठिनाई में पड़ गये हैं। इस सम्बन्ध में भारत सरकार से कई बार कहा जा चुका है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मुझे बहुत खेद है, श्रीमान्। शुरू में ही मुझे इस अनुच्छेद को स्थगित रखने का अनुरोध करना चाहिये था।

***अध्यक्ष:** यह सुझाव दिया गया है कि इस अनुच्छेद पर विचार अभी स्थगित रखा जाये।

***श्री आर. के. सिधवा:** उस हालत में मैं यह अनुरोध करूंगा कि, श्रीमान् मेरा संशोधन भी स्थगित रखा जाये।

***अध्यक्ष:** अगर अनुच्छेद पर ही विचार स्थगित रखा जाता है तो आपका संशोधन भी स्थगित ही रहेगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** तो ठीक है, श्रीमान्।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 251 को लेते हैं।

(नं. 2852 से 2857 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं, श्रीमान्:

"कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (2) में 'such percentage' (वह प्रतिशत भाग) शब्दों के आगे 'not being less than sixty percentage' (जो साठ प्रतिशत से कम न होगा) शब्द रखे जायें तथा 'or the taxes payable in respect of union emoluments' (अथवा संघ-परिलाभों के सम्बन्ध में देय कर न हों) शब्द हटा दिये जायें और इस अनुच्छेद के खण्ड (2) के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जाये–

'Provided that for a period of five years from the commencement of this Constitution, of the net proceeds assigned to the States, thirty-three and one-third per cent.,' shall be distributed among the States on the basis of population, fifty-eight and one- third per cent. on the basis of collection and the remaining eight and one-third per cent. shall be distributed in such manner as may be prescribed'"

(पर संविधान के प्रारम्भण से पांच वर्ष की अवधि तक राज्यों को सौंपे गये कुल आय में से $33^{1}/_{3}$ प्रतिशत जनसंख्या के आधार पर और $58^{1}/_{3}$ प्रतिशत संग्रह के आधार पर तथा शेष $8^{1}/_{3}$ प्रतिशत, उस रीति से जो कि एतदर्थ निर्धारित की जाये, राज्यों में वितरित कर दिया जायेगा।)

मेरे संशोधन में मुख्यत: तीन बातें कही गई हैं। पहली बात यह है कि राज्यों को वितरित किये जाने वाले आय-कर में केन्द्रीय परिलाभ भी शामिल समझे जायेंगे। आय-कर द्वारा केन्द्र को एक विशाल रकम मिलेगी इसलिये उचित यही है कि खण्ड (4) के उपखण्ड (ग) में वर्णित संघ-परिलाभ भी इस वितरण में शामिल किये जायें।

दूसरी बात जो संशोधन में कही गई है वह यह है कि इसके लिए एक न्यूनतम प्रतिशत नियत कर दिया जाये और संविधान में ही यह बात रख दी जाये। यह सच है कि पांच वर्ष के बाद एक आयोग नियुक्त किया जायेगा, जो इस वितरण के सम्बन्ध में उन सभी स्थितियों पर विचार करेगा जिनमें कि एक प्रान्त को संविधानानुसार चलना है। कहने का मतलब यह है कि प्रान्त की क्या आवश्यकतायें हैं, उसने क्या वचन दे रखे हैं और भविष्य में वह किस हद तक समुन्नत कर सकता है—इन सभी बातों पर आयोग विचार करेगा। पर इस मध्यवर्ती पांच साल की अवधि के लिए संविधान में इसके लिये कोई व्यवस्था नहीं रखी गई है कि इस आय का वितरण किस तरह किया जायेगा। मुझे मालूम हुआ है कि भारत सरकार का वित्त विभाग इसके लिए एक समिति नियुक्त करने जा रहा है जो इस अन्तवर्ती काल के लिये कुछ अवस्था निर्धारित करेगी। किन्तु इस सम्बन्ध

[श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन]

में इस समिति के सामने भी वही कठिनाइयां आयेंगी जो पांच साल बाद आयोग के सामने आयेंगी। यह एक बड़ा विवादग्रस्त विषय है और जो उप-समिति अभी नियुक्त की जायेगी उसके सामने प्रान्त अपने अलग दावे पेश करेंगे और उसे कई बातों का ख्याल रखना पड़ेगा जिससे वह बड़ी कठिनाई में पड़ जायेगी। भिन्न-भिन्न प्रान्तों के दावों के अनुसार कोई भी व्यवस्था निर्धारित करना उनके लिये बड़ा कठिन होगा। वित्त-आयोग नियुक्त होगा पांच साल के बाद और तब कहीं वह आय-कर वितरण के सम्बन्ध में कोई सिद्धान्त निर्धारित करेगा। पर इस अन्तर्वर्ती अवधि में भिन्न-भिन्न प्रान्तों को कई काम करने होंगे और उन्हें विकास विषयक कितने ही कार्यों को शुरू कर देना होगा। अगर उन्हें इस बात का कोई आभास नहीं रहता है कि वितरण में उन्हें क्या रकम मिल सकती है तो उनके लिए प्रतिवर्ष अपने बजट को ठीक करना बड़ा कठिन होगा। अगर वितरित किये जाने वाले इस कर के बारे में अभी ही से यह निर्धारित कर दिया जाये कि इसमें से अमुक न्यूनतम रकम प्रान्तों को दी जायेगी, तो इससे यह होगा कि प्रान्तों को यह पता रहेगा कि इस कर से क्या रकम उनको उस वर्ष मिल सकती है, क्योंकि पहले के अनुभव के आधार पर हर प्रान्त को यह मालूम ही हो जायेगा कि प्रान्त में इस मद में कितनी रकम इकट्ठी हो जायेगी, इस तरह उनको मोटा-मोटी एक अन्दाजा मिल जायगा कि आय-कर से क्या रकम उनको मिल सकती है। अगर कोई न्यूनतम प्रतिशत आप इसके लिए निर्धारित नहीं कर देते हैं और इसे समिति पर छोड़ देते हैं तो प्रान्तों को बड़ी कठिनाई होगी और वह विकास विषयक किसी भी स्थायी योजना को हाथ में नहीं ले सकते हैं। यही कारण है कि हमें एक न्यूनतम प्रतिशत इसके लिये निर्धारित ही कर देना चाहिये। मेरा प्रस्ताव यह है कि कम से कम इस आय का 60 प्रतिशत प्रान्तों और राज्यों को दिया जाये और मेरा मुख्य तर्क यह है कि एक न्यूनतम रकम उसके लिए निर्धारित कर दी जाये।

वितरण के सम्बन्ध में मैंने यह कहा है कि यहां एक न एक व्यवस्था निश्चित हो जानी चाहिये जिसके आधार पर इस अन्तर्वर्ती काल में प्रान्तों के दावों को तय किया जा सके। अगर ऐसा नहीं किया जाता है तो समिति के सामने भिन्न-भिन्न प्रान्त अपने अलग-अलग दावे पेश करेंगे और वह बड़ी मुसीबत में पड़ जायेगी। कुछ प्रान्त, जिनकी आबादी अधिक होगी यह कहेंगे कि आबादी के हिसाब से यह आय वितरित की जाये और कुछ प्रान्त यह कहेंगे कि संग्रह के हिसाब से वितरित की जाये। कुछ ऐसे भी प्रान्त होंगे जो कहेंगे कि न आबादी के हिसाब से और न संग्रह के आधार पर बल्कि और अन्य ही किसी आधार पर यह रकम वितरति की जाये। समिति के सामने तरह-तरह के दावे आयेंगे और वह कठिनाई में पड़ जायेगी। इसलिये अगर वितरण के लिये हम कोई प्रतिशत यही निर्धारित कर देते हैं और विवाद को यहीं समाप्त कर देते हैं तो समिति को बड़ी सहूलियत हो जायेगी। मेरा यह कहना है कि प्रान्तों को न्यूनतम प्रतिशत निश्चित कर दिया जाये ताकि वह अपने बजट को ठीक कर सके और विकास विषयक योजनाओं को हाथ में ले सके जो कई वर्षों में कहीं पूरी होंगी।

अवश्य ही केन्द्र को आय की और भी ज्यादा जरूरत है पर मेरा कहना यह है कि केन्द्र के पास तो आय के कितने ही साधन हैं जिनसे वह बड़ी रकम इकट्ठी कर सकता है, पर प्रान्तों के पास जो साधन हैं वह बहुत ही सीमित हैं और वह ऐसे हैं कि जनता के हितों का उनसे बड़ा गहरा सम्बन्ध है। सातवीं अनुसूची की सूची 2 में जो विषय रखे गये हैं जिन पर प्रान्तों को करारोपण का अधिकार है, वह ऐसे हैं कि उन पर कर लगाने में वहां की जनता जबरदस्त विरोध करेगी उन मदों पर कर लगाने से तो प्रान्तीय शासन अप्रिय बन जायेगा और फिर उनसे आय भी बड़ी सीमित ही रहेगी। इसलिये आयकर का, जिसमें कि एक काफी बड़ी रकम इकट्ठी होगी, एक न्यूनतम प्रतिशत प्रान्तों के लिये निर्धारित कर दिया जाना चाहिये ताकि उसके हिसाब से वह अपना बजट बना सकें। मेरा इतना ही कहना है।

(भाग 2 के नं. 2859 से 2878 के संशोधन तथा पूरक सूची संशोधन नं. 75 नहीं पेश किये गये।)

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्:

"कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (2) में 'revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें"

(संशोधन नं. 75, 76 और 77 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** संशोधन नं. 244।

***प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं, श्रीमान्:

'कि संशोधन-सूची के संशोधन नं. 2875 की जगह निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:-

"अनुच्छेद 251 के खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) की उपकण्डिका (1) और (2) में 'by the President by order' शब्दों के स्थान पर 'by Parliament by law' शब्द रखे जायें।'"

इस उपखण्ड (ख) (1) में यह कहा गया है कि:

" 'Prescribed' means—until a Finance Commission has been constituted, prescribed by the President by Order,"

(विनिहित का अर्थ यह है-

जब तक कि आयोग का संघटन न हो चुके तब तक राष्ट्रपति से आदेश द्वारा।) उपखण्ड (ख) (2) में यह कहा गया है:

"after a Finance Commission has been constituted, prescribed by the President by order after considering the recommendations of the Finance Commission."

(वित्तायोग के संघटित हो चुकने के पश्चात वित्तायोग के अभिस्तावों पर विचार करके राष्ट्रपति से आदेश द्वारा विनिहित।)

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

इस अनुच्छेद में, श्रीमान्, विभिन्न प्रान्तों में केन्द्रीय शासन द्वारा संग्रहीत आयकर के वितरण के सम्बन्ध में व्यवस्था दी हुई है। उसमें यह कहा गया है कि "किसी आर्थिक वर्ष में के ऐसे किसी कर के शुद्ध आय का वह प्रतिशत भाग इत्यादि इत्यादि....उन राज्यों को उस रीति से विभाजित किया जायेगा जो कि विनिहित किया जाये"। यहां विनिहित का अर्थ बताया गया है कि जब तक कि वित्तायोग का संघटन न हो चुके तब तक तो राष्ट्रपति से आदेश द्वारा विनिहित और वित्तायोग के संघटित हो जाने के बाद भी विनिहित का अर्थ यही होगा कि राष्ट्रपति से आदेश द्वारा विनिहित। मेरा संशोधन यह है कि वित्तायोग के संघटित हो जाने के बाद 'विनिहित' का मतलब होना चाहिये कि संसद् विधि द्वारा जो विनिहित करे। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण अनुच्छेद है, श्रीमान् और इसके अनुसार आयकर को विभिन्न प्रान्तों में वितरित किया जायेगा। अभी अभी श्री बर्मन ने यह संशोधन उपस्थित किया है कि इसका 60 प्रतिशत प्रान्तों को दिया जाये और इसे किस हिसाब से वितरित किया जाये इसका भी आपने सुझाव दिया है। उन्होंने तीन सुझाव दिये हैं। उनका कहना है कि इसका कुछ प्रतिशत तो आबादी के हिसाब से और कुछ प्रतिशत संग्रह के हिसाब से और शेष एक अन्य रीति से वितरित किया जाये। इस तरह हम यह देखते हैं कि यह विषय बड़ा विवादग्रस्त है। संघ-संविधान के वित्तीय प्रावधानों पर विचार करने के लिए जिस विशेषज्ञ समिति को आपने नियुक्त किया था, श्रीमान्, उसने अपनी रिपोर्ट में इस कर का इतिहास बताया है और यह कहा है:-

> "आयकर के वितरण के सम्बन्ध में प्रान्तों में बड़ा मतभेद है। बम्बई और पश्चिमी बंगाल का मत है कि संग्रह या आवास के हिसाब से वितरित किया जाये। संयुक्तप्रान्त का कहना है कि आबादी के हिसाब से बांटा जाये, बिहार का मत है कि आबादी और वसूली दोनों के सम्मिलित आधार पर वह बांटा जाये। उड़ीसा उड़ीसा और आसाम यह चाहते हैं कि चूंकि वह पिछड़े हुये हैं उनके साथ वितरण में खास रियायत की जानी चाहिये। पूर्वी पंजाब ने इसके लिये किसी आधार पर सुझाव नहीं रखा है पर वह यह चाहता है कि उसकी तीन करोड़ की कमी इससे किसी तरह पूरी हो जाये।"

इस तरह हम यह देखते हैं, श्रीमान्, कि आयकर के वितरण के बारे में प्रान्तों की भिन्न-भिन्न रायें हैं। हम सभी जानते हैं कि आयकर केन्द्रीय राजस्व का एक प्रमुख साधन है। इस अनुच्छेद में केवल इस सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है कि आयकर को केन्द्र तथा प्रान्तों में किसी तरह वितरित किया जायेगा और यह कहा गया है कि उस आय का एक ऐसा प्रतिशत अंश जो कि विनिहित किया जाये राष्ट्रपति के आदेश अनुसार बांट दिया जायेगा, मेरा ख्याल यह है कि आयकर विभाजन का प्रश्न एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है और इसे सिर्फ राष्ट्रपति के विवेक पर छोड़ना ठीक न होगा। अवश्य ही राष्ट्रपति के आदेश के अनुसार उसके वितरण का अर्थ भी यह होगा कि कार्यपालिका उसका वितरण करेगी। किन्तु मैं चाहता यह हूं कि उसके वितरण की व्यवस्था संसद् विधि द्वारा करे। वित्तायोग की रिपोर्ट आने के पहले शासन को इस सम्बन्ध में एक विधेयक उपस्थित करना चाहिये, जिसमें यह दिया हो कि आयकर की आमदनी को शासन किस तरह वितरित करना चाहता है और संसद् यदि पसन्द करेगी, तो उसे स्वीकार करेगी। इसी तरह

वितायोग के संघटित हो जाने पर भी शासन एक विधेयक उपस्थित करके यह बतलावे कि वित्तायोग की किन सिफारिशों को स्वीकार करती है और किस हिसाब से वह आयकर का वितरण करना चाहता है। विधेयक के उपस्थित किये जाने पर संसद् वह निर्णय कर सकेगी कि किस हिसाब से वितरण किया जाये। मैं नहीं समझता कि सैकड़ों करोड़ रुपयों के वितरण की महत्वपूर्ण शक्ति राष्ट्रपति में निहित की जानी चाहिये। यह शक्ति तो संसद् को ही प्राप्त रहनी चाहिये। आयकर को केन्द्र तथा प्रान्तों में वितरण की शक्ति संसद् को रहनी चाहिये और इस शक्ति से हमें वंचित न रखना चाहिये। यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण प्रश्न है और मुझे आश्चर्य है कि मसौदा-समिति के ध्यान में यह बात कैसे न आ सकी। मैं नहीं समझ पाता कि सभी शक्तियां वह राष्ट्रपति में ही क्यों केन्द्रित कर देना चाहती है। कम से कम इस मसले में तो देश की सर्वक्षमता प्राप्त संसद् की राय ही को मान्यता मिलनी चाहिये। अगर यह प्रश्न संसद् के समक्ष आयेगा तो देश को मालूम हो सकेगा कि प्रान्तों की क्या आवश्यकतायें हैं और हम यह समझ सकेंगे कि किस हिसाब से वितरण करना ठीक रहेगा। मेरे संशोधन बिल्कुल सरल हैं और मैं नहीं समझता कि मसौदा-समिति उनको अस्वीकार करेगी।

पर मैं यह कहूंगा कि इन संशोधनों में लोकतंत्र का सार निहित है। अगर सैकड़ों करोड़ रुपये राष्ट्रपति ही आदेश द्वारा वितरित कर दे तो फिर संसद् किस काम के लिए रहेगी? अगर आयकर का वितरण संसद् नहीं करती है तो फिर उसके और प्रकार्य ही क्या होंगे? यह तो एक बड़ी ही असाधारण सी बात होगी। वित्तायोग उन सिद्धान्तों के सम्बन्ध में जिनके आधार पर कि आयकर का वितरण किया जाना चाहिये, एक रिपोर्ट पेश करेगा और संसद् उन पर विचार करके एक विधेयक उपस्थित करेगी, जिसमें यह बात दी हुई होगी कि वित्तायोग की सिफारिशों को वह किस तरह कार्यान्वित करना चाहती है। संसद् को यह शक्ति अवश्य प्राप्त रहनी चाहिये, ताकि भिन्न-भिन्न प्रान्तों को वह समुचित अंश मिल सके। यह एक गम्भीर प्रश्न है और मैं नहीं समझता कि ऐसे प्रावधान को जिसमें राष्ट्रपति को आदेश द्वारा एक असीम राशि वितरित करने की शक्ति दी गई हो, संविधान में रखना ठीक होगा।

अनुच्छेद के दूसरे हिस्सों में वस्तुतः यह बात कही गई है कि आयकर के मद में किन-किन रकमों को शामिल किया जायेगा। यहां यह कहा गया है कि संघ-परिलाभ इसमें शामिल न किये जाने चाहियें। पर कुछ लोगों का विचार यह है कि यह भी शामिल करना चाहिये। विशेषज्ञ-समिति की भी यही राय है कि संघ-परिलाभ इसमें ही शामिल किये जाने चाहियें। इस सम्बन्ध में मैं कुछ आपत्ति न करूंगा पर वितरण सम्बन्धी व्यवस्था के बारे में मुझे अवश्य आपत्ति है। वितरण होना चाहिये संसद्-निर्मित विधि के अधीन, न कि राष्ट्रपति के आदेश के अनुसार।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): एक संशोधन मुझे रस्मी तौर पर उपस्थित करना है, श्रीमान्। सभा ने अनुच्छेद में सर्वत्र 'Revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखना तय किया है। पर यहां खण्ड (4) के उपखण्ड (ग) में 'Revenues of India' शब्द ही आ गये हैं। इसलिये आपकी अनुमति से मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्:-

> "कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (4) के उपखण्ड (ग) में 'Revenues of India' शब्द की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल): इन अनुच्छेद पर विचार करने में हमें आप द्वारा नियुक्त सरकार-कमेटी की सिफारिशों पर विचार करना होगा जिसे आपने केन्द्र एवं प्रान्तों के आर्थिक सम्बन्ध के बारे में रिपोर्ट देने के लिए नियुक्त किया था। कतिपय कठिनाइयों के कारण उस समिति की रिपोर्ट पर यहां सभा में विचार न किया जा सका था। इसलिये यह आवश्यक है कि इस अनुच्छेद पर विचार करते समय उस रिपोर्ट पर भी पूरी तरह खुलकर यहां विचार करने की आप अनुमति दें।

मैं तो यह उम्मीद करता था कि सरकार-कमेटी को जिन बातों पर विचार करने के लिए कहा जायेगा वह काफी व्यापक होंगी और उनके अधीन वह उनसे कहीं अधिक प्रश्नों पर विचार करेगी जिन पर कि उसने विचार किया है। मैं आपसे, श्रीमान्, तथा इस सभा से यह निवेदन करूंगा कि अब समय आ गया है कि केन्द्र एवं प्रान्तों में आय के सम्बन्ध में एक समुचित प्रणाली को कार्यान्वित करने का उपाय हम ढूंढ निकालें। इस बात की कभी चिन्ता ही नहीं की गई कि शासन की आय या आगमों को एक समुचित ढंग पर किसी सुव्यवस्थित वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर विकसित किया जाये। इसका परिणाम यह हुआ है कि किसी सुव्यवस्थित योजना के अभाव में आगम के सम्बन्ध में जो भी पद्धति खुद चल पड़ी, वही जारी रह गई और उसी के आधार पर जो आय होती रही सो होने दी गई और ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न के बारे में कभी वैज्ञानिक प्रणाली को अपनाने का कभी विचार ही नहीं किया गया। सरकार कमेटी की रिपोर्ट में ऐसी कोई बात नहीं है जिसके आधार पर इस समस्या का समाधान किया जाये। उस समिति ने अपनी रिपोर्ट में इस सभा से सिर्फ इस सभा से सिर्फ इस बात की सिफारिश मात्र कर दी है कि राजस्व सम्बन्धी कई रकमों का प्रान्तों एवं केन्द्र में तथा परस्पर प्रान्तों में रीति से विभाजन किया जाये। समिति की सिफारिशों की परिधि बड़ी सीमित है, सुतरां मुझे भी यहां अपनी बात को इन सिफारिशों तक ही सीमित रखना पड़ेगा। इस अनुच्छेद पर विचार करते समय आयकर की आमदनी के वितरण के अलावा मैं अन्य किसी बात पर यहां विचार नहीं कर सकता। सरकारी कमेटी का कहना यह है कि आयकर का 60 प्रतिशत अंश प्रान्तों को दे दिया जाये और शेष 40 प्रतिशत केन्द्र के पास रहे। मैं यह आशा करता था कि समिति इस बात पर पर्याप्त प्रकाश डालेगी कि केन्द्र को 40 प्रतिशत देने की सिफारिश क्यों की जा रही है। इस सम्बन्ध में प्रो. अदारकर एवं श्री नेहरू की रिपोर्ट का मैं यहां उल्लेख करूंगा। इस रिपोर्ट में यह बताया गया है कि आस्ट्रेलिया में केन्द्रीय सरकार आयकर का केवल 25 प्रतिशत अंश अपने पास रखती है और शेष विभिन्न इकाइयों को सौंप देती है। यहां केन्द्रीय सरकार उससे 15 प्रतिशत अधिक क्यों ले? यह ऐसा विषय है जिस पर सरकार-समिति को कुछ न कुछ प्रकाश जरूर डालना चाहिये था। यह सच है कि आज की स्थिति में केन्द्र को अधिक रकम की आवश्यकता है। पर आज की कठिन स्थिति को आप स्थायी क्यों बना रहे हैं? जो लोग यह कहते हैं कि प्रथम तीन, या पांच या दस साल तक केन्द्र को अधिक खर्च करना होगा उनसे मुझे कोई शिकायत नहीं है। पर आयकर का 40 प्रतिशत भाग सदा के लिए केन्द्र को मिलता रहे, यह व्यवस्था अवश्य ही मुझे औचित्यपूर्ण नहीं प्रतीत होती है।

अब तक तो मैंने केन्द्र एवं प्रान्तों के बीच आयकर का वितरण कैसे हो, इस पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। अब मैं इस बात को लेता हूं कि प्रान्तों

में उसका विभाजन किस हिसाब से होना चाहिये। इस प्रश्न पर भी सरकार-कमेटी की सिफारिशों से मेरा मतैक्य नहीं है। सन् 1935 तक आयकर प्रान्तीय विषय न था। भारत-शासन-अधिनियम 1935 के अधीन आयकर केन्द्रीय विषय था। इस कर का आरोपण, इसमें वृद्धि करना और वितरण करना केन्द्र के हाथ में था, पर 1935 के अधिनियम में यह व्यवस्था जरूर कर दी गई थी कि इसका 50 प्रतिशत अंश केन्द्र प्रान्तों को बांट देगा। 15 अगस्त सन् 1947 तक सर ओटो नेमर का निर्णय लागू रहा। आयकर का वितरण जिन सिद्धान्तों के आधार पर होता है वह बहुत अनुचित है और इनके कारण छोटे-छोटे प्रान्तों को तो विकास ही अवरूद्ध हो गया है। इस सम्बन्ध में मैं यह कहूंगा कि ब्रिटिश अमलदारी में प्रान्तों का विकास एक विचित्र ढंग से हुआ था। किसी सुव्यवस्थित योजना के आधार पर भारत वर्ष का विकास करने के निमित तो अंग्रेजों ने यहां प्रान्तों की रचना की नहीं थी। अपनी सुविधा के लिये और ब्रिटिश व्यवसाय को मदद देने की गरज से उन्होंने प्रशासन तथा व्यापार केन्द्रों की स्थापना की थी। इसी का परिणाम था जो उन्होंने यहां प्रेसिडेंसियां स्थापित की थीं ओर इनको कुछ अधिक प्रतिष्ठा और सुविधा दे रखी थीं। यह प्रतिष्ठा और सुविधा इन प्रेसिडेन्सियों को केवल इसीलिये दी गई थी कि ब्रिटिश शासन को प्रतिष्ठा प्राप्त रहे और ब्रिटिश व्यवसाय को सुविधा मिले। यही कारण था जो सभी व्यवसाय-प्रतिष्ठान इन्हीं प्रेसिडेन्सी नगरों में ही स्थापित किये गये। अन्य कई व्यावसायिक प्रतिष्ठान और किसी प्रान्त में स्थापित किये गये, तो केवल संयुक्त प्रान्त जैसे चन्द भाग्यशाली प्रान्तों में ही। यही कारण था जो सर ओटो नेमर ने आयकर की रकम को दुर्भाग्य से संग्रह के आधार पर वितरित किये जाने की व्यवस्था चालू रहने दी। संग्रह के आधार पर इसका वितरण करना एक अन्यायपूर्ण एवं अस्वाभाविक सिद्धांत होगा, क्योंकि आयकर की रकम वस्तुओं की खपत और उपयोग के कारण संग्रहीत हो पाती है और इनका उपयोग और खपत आम जनता ही करती है। इसलिये व्यापार—देशी या विदेशी—किसी तरह से क्यों न चलाया जाये और कुछ खास स्थापित केन्द्रों से ही क्यों न समूचे कारबार का संचालन किया जाये, पर यह कहना अन्याय होगा कि जिन प्रान्तों में ये व्यवसाय-प्रतिष्ठान अवस्थित है या जिन प्रान्तों में इनकी हेड एजेंसियां या निर्माण केन्द्र हों उन्हीं को कारोबार की आय का अंश मिलना चाहिये। यही बात है, जैसे वर्तमान वितरण-व्यवस्था को मैं अवैज्ञानिक एवं अनुचित बता रहा हूं।

जैसाकि मैं पहले ही कह चुका हूं, अंग्रेजों ने कभी इस दिशा में कोई प्रयास नहीं किया कि यहां शासन की आय को किसी सुव्यवस्थित राष्ट्रीय योजना के आधार पर विकसित किया जाये। अपनी व्यावसायिक प्रवृत्ति एवं व्यावसायिक दृष्टिकोण से प्रेरित होकर उन्होंने संग्रह के आधार पर ही इस मसले पर विचार किया, क्योंकि उनके देश में विभिन्न स्थानीय प्रदेशों का विकास एक समान रूप से हुआ है। वहां अगर किसी प्रदेश ने किसी व्यावसायिक क्षेत्र में समुन्नति की है तो दूसरे प्रदेश ने कृषि-क्षेत्र में समुन्नति की है। इसलिये दोनों ही प्रदेशों को वहां यथासमय समान अनुपात से लाभ मिल जाता है। परन्तु दुर्भाग्य से यहां अपने देश में ऐसी स्थिति नहीं है। इसलिये सर ओटो नेमर के दृष्टिकोण को हम औचित्यपूर्ण नहीं कह सकते हैं। एक दूसरी समिति की रिपोर्ट से भी इसी बात का समर्थन होता है। यहां मेरा संकेत है फेडरल फाइनान्स कमेटी की रिपोर्ट की ओर जो गोलमेज सभा के निश्चय के फलस्वरूप नियुक्त की गई थी और जिसने

[श्री विश्वनाथ दास]

1933 में अपनी रिपोर्ट पेश की थी। उसमें आप देखेंगे कि कमेटी का निर्णय यही था कि आबादी के आधार पर आयकर का वितरण हो।

इस सम्बन्ध में मैं पुनः प्रो. अदारकर तथा श्री नेहरू की सिफारिशों का हवाला दूंगा। उन्होंने इस सम्बन्ध में तीन मुख्य आधार निर्धारित किये हैं। पहला तो यह कि आबादी के आधार पर उसका वितरण किया जाये। दूसरा क्षेत्र के आधार पर और तीसरा यह कि संग्रह के आधार पर। संग्रह को उन्होंने अंतिम स्थान दिया है और ऐसा करना ठीक ही है क्योंकि संग्रह के आधार पर आयकर का वितरण करना एक कृत्रिम पद्धति होगी। यह सच है कि कलकत्ता, बम्बई और मद्रास जैसे केन्द्रों की ओर हमें अधिक ध्यान देना होगा। उन्हें औरों से कुछ ज्यादा दीजिये, पर यह सर्वथा अनुचित है कि आयकर के एक बड़े अंश की यही केन्द्र मांग करें। इन तीन प्रेसीडेन्सियों से आये हुये मित्र यदि यह अनुभव करते हो कि मैं उनके प्रति कठोर हूं, तो वे मुझे क्षमा करेंगे। ऐसी कोई बात नहीं हैं। मैं चाहता यह हूं कि सबको एक समान रूप से विकास का मौका मिले। मैं यह नहीं चाहता हूं कि कोई भी प्रान्त असुविधा में पड़े। मैं यह अनुभव करता हूं कि मैं एक भारतीय हूं और मुख्यतः एक भारतीय के दृष्टिकोण से ही यहां बोलता हूं। इन तीन समुन्नत प्रान्तों की भलाई का मुझे सदा ख्याल है पर मैं यह चाहता हूं कि उन्हें भी इस बात का ख्याल होना चाहिये कि अन्य प्रान्तों में रहने वाले उनके भाई और बहनों को उनकी तरह समुन्नत बनने का मौका मिले और यह भी खुशहाल हों। अन्य प्रान्त समुन्नति में उनसे पीछे ही रहें, पर समुन्नति की दशा में उन्हें उन्नत प्रान्तों का अनुगमन तो करने दीजिये। यदि ऐसा नहीं होता है तो यह बिचारे पिछड़े ही रह जायेंगे। इसलिये मैं इस सिद्धांत मैं सहमत नहीं हूं कि आयकर का वितरण संग्रह के आधार पर किया जाये।

सरकार-कमेटी ने भी आयकर के वितरण के सम्बन्ध में वही भूल की जो, सर ओटो नेमर ने की। हां, सरकार-कमेटी ने इतना जरूर किया है कि आयकर का 60 प्रतिशत भाग प्रान्तों में बांटने का और शेष 40 प्रतिशत केन्द्र में रखने का सुझाव दिया है। मेरा कहना यह है कि प्रान्तों को उन्हें और ज्यादा देना चाहिये था क्योंकि देश की राष्ट्रनिर्माण सम्बन्धी योजनाओं को कार्यान्वित करने का भार मुख्यतः प्रान्तों पर ही रहेगा।

रिपोर्ट की एक दूसरी बात को लेकर भी उसकी तीव्र निन्दा की गई है। उसकी उस सिफारिश की कठोर आलोचना की गई है कि आयकर की आमदनी का 60 प्रतिशत अंश जो प्रान्तों को दिया जाये, उसमें से 35 प्रतिशत संग्रह के आधार पर दिया जाये। इसका मतलब यह हुआ कि प्रायः कुल आमदनी का 60 प्रतिशत अंश संग्रह के आधार पर बांटा जायेगा। मुझे यह बहुत ही अनुचित प्रतीत होता है। मैं पहले भी कह चुका हूं और फिर उसी बात को दुहराता हूं। आयकर की अवाप्ति होती है जनता की आय से और वह आंका जाता है उत्पादन और खपत के हिसाब से। कृषि-प्रधान प्रान्त कच्चे माल का उत्पादन करते हैं और उद्योग-प्रधान प्रान्त उन कच्चे मालों को लेकर अपने कारखानों के जरिये पक्का माल तैयार करते हैं। कारखानों में तैयार किया हुआ पक्का माल खपत के लिए फिर उन्हीं प्रान्तों को पहुंचता है। पर पक्के माल के जरिये आय जो होती है वह उन्हीं

भाग्यशाली उद्योग-प्रधान प्रान्तों में ही वितरित कर दी जाती है जिसका नतीजा यह होता है कि इन तीन प्रान्तों में ही सारे व्यावसायिक प्रतिष्ठानों की स्थापना हो पाती है और बेचारे कृषि-प्रधान प्रान्त आयकर के लाभ से वंचित रखे जाते हैं; यद्यपि उस पर इनका भी अधिकार है और वह उन्हें मिलना चाहिये। ऐसी दशा में मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि 60 प्रतिशत अंश में 35 प्रतिशत को संग्रह के आधार पर वितरित किया जाये। ऐसा करना छोटे-छोटे प्रान्तों के साथ अन्याय होगा।

माननीय सदस्यों से मैं इस बात के लिये और भी अनुरोध करूंगा कि एक रक्षित निधि (Reserve Fund) की स्थापना की उपयोगिता पर विचार करे। इस रक्षित निधि की चर्चा करते समय मेरे दिमाग में कई पूर्ववर्ती उदाहरण मौजूद हैं। आपके सामने 'Petrol Cess Fund' की, जिसे साधारणतः लोग 'Road Cess Fund' के नाम से पुकारते हैं, मिसाल मौजूद है। इसका वितरण एक खास हिसाब से किया जाता है। इसका 15 प्रतिशत अंश केन्द्र अपने पास रख लेता है और इसलिये कि अनुन्नत प्रदेशों को उन्नत बनाने में इसका उपयोग किया जा सके। इसलिये मेरा कहना यह है कि केन्द्र कुछ अंश अपने पास रख ले और समस्त देश के हित का ख्याल रखते हुये उसका वितरण समुचित रूप में एक समान आधार पर करे। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं सभा से यह अनुरोध करूंगा कि वह उन बातों पर, जिनका जिक्र मैंने अपनी वक्तृता में किया है, समुचित रूप से विचार करे।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन ने अपने संशोधन के द्वारा जो प्रश्न यहां उठाया, वह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है और सभा को इस पर खूब सावधानी के साथ विचार करना चाहिये। इस संशोधन का प्रभाव क्या पड़ेगा उसे समझने के लिए हमें अतीत की ओर दृष्टिपात करना पड़ेगा और आयकर की आमदनी के वितरण के सम्बन्ध में भारत सरकार तथा प्रान्तों का जो वर्तमान सम्बन्ध है, इस पर विचार करना होगा। भारत-शासन-अधिनियम के अधीन 1936 में सपरिषद् सम्राट का एक आदेश निकाला गया था, जिसमें आयकर की आमदनी का 50 प्रतिशत प्रान्तों का अंश निर्धारित किया गया था। इसमें चीफ कमिश्नर वाले प्रान्तों को दी जाने वाली रकम तथा संधानीय परिलाभों का कर शामिल नहीं है।

युद्ध छिड़ने तक या कहिये कि युद्ध छिड़ जाने के तीन या चार साल बाद तक भी भारत सरकार प्रान्तों को उनका वह अधिकतम अंश नहीं दे पाती थी, जो सपरिषद् सम्राट के आदेश द्वारा निर्धारित किया गया था। इस आदेश में यह कहा गया था कि आदेश में उल्लिखित दो कालावधियों में से प्रथम में भारत सरकार आयकर के प्रान्तीय अंश में उतनी रकम अपने पास रख सकती है, जिसको उस रकम के साथ अगर जोड़ा जाये तो रेलवे सम्बन्धी अंशदान के रूप में प्रान्त को केन्द्रीय राजस्व में देना जरूरी होता हो, तो कुल जोड़ 13 करोड़ होता है। युद्ध के दिनों में जब रेलवे की बचत की रकम काफी बढ़ गई थी, उस समय भारत सरकार के लिये यह जरूरी नहीं था कि प्रान्तों के अंश में वह कोई रकम रखे, ताकि कुल जोड़ 13 करोड़ का हो जिसका कि मैंने अभी-अभी उल्लेख किया हैं मैं ठीक-ठीक यह नहीं जानता कि वर्तमान समय में प्रान्तों का अंश क्या है, पर मुझे विश्वास है कि आयकर की कुल आमदनी में से 50 प्रतिशत अंश इस तरह से हिसाब लगाकर जिसका मैंने अभी-अभी उल्लेख किया है, प्रान्तों को जरूर दिया जाता है। हमें देखना यह है कि युद्ध की समाप्ति के बाद से भारत सरकार

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

की आर्थिक अवस्था इतनी समुन्नति हो गई क्या कि वह आयकर में से कोई बड़ा अंश प्रान्तों को दे सके। जो भी भारत सरकार के 1947–48 और 1948–49 के बजट से अच्छी तरह परिचित है, वह इस बात को जानता होगा कि भारत सरकार की आर्थिक अवस्था कितनी भयावह है। गत बजट पर जब यहां बहस हो रही थी तो हममें से कइयों ने केन्द्र को असन्तोषप्रद आर्थिक अवस्था की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट करने का साहस किया था। पर अर्थ मंत्री ने यह सोचा कि हम लोगों ने जो तर्क पेश किये थे वह बच्चों के से थे। पर मुझे विश्वास है कि अर्थ मंत्री महोदय भी आज इसे अच्छी तरह समझ गये हैं कि हमारी आर्थिक स्थिति उससे कहीं ज्यादा खराब है जितनी कि तीन या चार माह पहले हममें से गम्भीर निराशावादी भी समझते थे। आज ऐसी स्थिति में, जबकि हमारे बजट में जबरदस्त घाटा है, जब हमारी साख इतनी गिर गई है कि कर्ज लेने में हम हिचकते हैं, श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करने को भला कौन व्यक्ति वांछनीय कह सकता है? उन्होंने अपना यह संशोधन रखा है विशेषज्ञ-समिति की सिफारिशों के आधार पर, जो श्री एन.आर. सरकार के सभापतित्व में बैठी थी। आयकर में से प्रान्तों के लिए अंश की मांग करने में आप अवश्य ही उतनी दूर नहीं गये जितनी कि विशेषज्ञ समिति पर, जहां तक कि आयकर की कुल आमदनी के उस अंश का सम्बन्ध है, जो कि प्रान्तों को सौंपा जायेगा, वह विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों के साथ है। विशेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट में यह कहा है कि अगर उसकी सिफारिशें मंजूर की जाती हैं, तो अनुमानतः केन्द्रीय राजस्व में सम्पत्ति तथा उत्तराधिकार शुल्क की कुल आमदनी का 40 प्रतिशत कम 30 करोड़ की कमी हो जायेगी। यह मंजूर करते हुये भी कि श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन का संशोधन विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों से ज्यादा नरम है, यह स्पष्ट है कि सभा को एक ऐसी समिति के सिद्धान्तों को न स्वीकार करना चाहिये, जिसका यह ख्याल हो कि केन्द्र बिना किसी कठिनाई के 30 करोड़ प्रान्तों को दे सकता है। हमारी आर्थिक अवस्था आज इतनी गम्भीर है जितनी कि हो सकती है। इसलिये मैं नहीं समझता कि श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन की बात को स्वीकार करना समस्त भारत के हित को देखते हुये उपयुक्त होगा। इससे प्रान्तों को लाभ हो सकता है, पर प्रान्तों का आर्थिक तथा प्रशासन सम्बन्धी स्थैर्य बहुत कुछ निर्भर करता है केन्द्र की स्थिति पर। प्रान्तों की अदूरदर्शिता होगी, अगर वह इस बात की परवाह किये बिना कि उनकी मांग से केन्द्रीय सरकार की स्थिति पर क्या असर पड़ेगा, वह केन्द्र से आयकर से और बड़ा अंश पाने की मांग करते हैं। अतः मैं फिर से इस बात को कहता हूं कि मेरी राय में आज जो हमारी आर्थिक अवस्था है वह ऐसी नहीं है कि हम ऐसे किसी प्रस्ताव को, जैसा कि श्री बर्मन ने यहां पेश किया है, स्वीकार कर सकें।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): मुझे खेद है कि माननीय मित्र की वक्तृता में मैं हस्तक्षेप कर रहा हूं, पर मैं उनसे एक बात पूछना चाहता हूं। माननीय मित्र के पास इस सम्बन्ध में क्या आंकड़े हैं? सरकार-कमेटी की रिपोर्ट के पृष्ठ पर पैरा 59 में यह कहा गया है 30 करोड़ की रकम प्रान्तों को देना केन्द्र की क्षमता के बाहर की बात नहीं है। इसलिये मैं पूछता हूं कि सिवाय इस कथन के कि केन्द्र की आर्थिक स्थिति गिर गई है और उनके यहां क्या आंकड़े हैं, जिनके आधार पर सरकार-कमेटी के निर्णय का आप खण्डन कर रहे हैं?

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** केन्द्र की आर्थिक स्थिति का गिर जाना बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका हमें ख्याल रखना ही होगा। विशेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट दिसम्बर 1947 में प्रस्तुत की थी। मैं यह पूछता हूं कि आज स्थिति क्या वही है जो उस समय थी या वह इतनी खराब हो गई है कि वह चिन्ताजनक हो गई है? बजट पर जो बहस हुई थी, उसमें माननीय मित्र ने भी भाग लिया था और.....

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र:** पर यह स्थिति अल्पकालिक है, सदा तो नहीं बनी रहेगी।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** हमारे यह माननीय मित्र भी भारत सरकार की आर्थिक स्थिति में उतने ही निराश थे जितना कि यहां के अन्य सदस्य। पर आज आप यह दलील पेश कर रहे हैं कि भारत सरकार की आर्थिक स्थिति सदा ही वैसी असन्तोषजनक नहीं बनी रहेगी, जैसी कि आज है।

अगर स्थिति में सुधार होता है तो हम प्रान्तों और केन्द्र के आर्थिक सम्बन्ध पर फिर से विचार कर सकते हैं। वित्तायोग की नियुक्ति को सिफारिश करने में भारत सरकार का भी एक उद्देश्य है। मुझे विश्वास है कि माननीय मित्र ने संविधान के मसौदे को ध्यान से पढ़ा है और वह इस बात को जानते हैं कि वित्तायोग की नियुक्ति का जो प्रावधान किया गया है वह इसीलिये कि सामाजिक कल्याण के कामों के लिए जिनते धन की प्रान्तों को आवश्यकता हो उससे वह वंचित न रह जाये। पर वह या और कोई सदस्य अगर यह कहते है कि केन्द्र की आर्थिक अवस्था में सुधार हो चुका है तो मैं इसमें साथ नहीं दे सकता। अगर माननीय मित्र का कहना यह नहीं है तो मैं नहीं समझ सकता कि मेरे सम्मुख प्रश्न रखने में उनका और क्या मतलब था। उनके प्रश्न रखने के पहले मैं यही कह रहा था कि माना कि सामाजिक एवं अन्य सेवाओं को, जिन पर कि जनता का कल्याण निर्भर करता है, समुन्नत करने की जिम्मेदारी प्रधानत: प्रान्तों पर है, पर इस समय हमें यह मानना होगा कि केन्द्र उस स्थिति में नहीं है कि वह प्रान्तों को, 30 करोड़ अथवा 20 या 15 करोड़ भी दे सके।

श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन के संशोधन में केवल इतना ही नहीं कहा गया है कि आयकर की आमदनी में से जो अंश आज प्रान्तों को मिलता है उससे बड़ा अंश उन्हें दिया जाये। आयकर का प्रान्तीय अंश किस हिसाब से प्रान्तों में वितरित किया जाये उसके लिये एक प्रणाली भी उनके संशोधन में सुझाई गई है। विशेषज्ञ समिति ने इस सम्बन्ध में जिस पद्धति की सिफारिश की है उसी पद्धति को अपनाने की बात संशोधन में कही गई है। श्री बर्मन का कहना है कि आयकर का वितरण प्रान्तों में होना चाहिये आबादी के आधार पर, वसूली के आधार पर तथा अन्य कई बातों के आधार पर। विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों के आधार पर आपका कहना है कि आयकर के प्रान्तीय अंश में से $58^{1}/_{3}$ प्रतिशत भाग वसूली के आधार पर वितरित किया जाना चाहिये। विशेषज्ञ समिति के प्रति सम्मान भाव रखते हुये भी मैं यह कहूंगा कि वसूली के आधार पर प्रान्तों के अंश का हिसाब लगाना किसी भी हालत में एक ठोस पद्धति नही कही जा सकती है। भारत सरकार ने एक कमेटी आस्ट्रेलिया भेजी थी इस बात की खोज करने के लिये कि वहां के केन्द्रीय शासन ने विभिन्न राज्यों के शासनों को उनकी आर्थिक स्थिति ठीक बनाये रखने में तथा उनकी सामाजिक कल्याण के कार्यों को समुन्नत करने में किस तरह

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

सहायता दी थी। इस कमेटी में श्री बी.के. नेहरू और श्री अदारकर भी शामिल थे। अपनी सिफारिशों में इस समिति ने साफ तौर पर विशेषज्ञ समिति द्वारा अभिस्वतित तथा श्री बर्मन द्वारा स्वीकृत आधार को अस्वीकार कर दिया है। इस कमेटी ने यह कहा है कि इसका वितरण आबादी, क्षेत्रफल तथा फी आदमी की आमदनी के आधार पर होना चाहिये। उसने वितरण के लिए फी आदमी की आमदनी का जो आधार सुझाया है, उसके हिसाब से अधिक सम्पन्न प्रान्तों को उसकी सम्पत्ति के अनुपात से केन्द्र को कम सहायता मिलेगी और गरीब प्रान्त को जो मुश्किल से गुजारा कर पाता है अधिक सहायता मिलेगी। आस्ट्रेलिया के कामनवेल्थ ग्रान्ट्स कमीशन ने अपने अनुभव के आधार पर इन्हीं तीन बातों को राज्यों की सहायता प्रदान करने के लिये सर्वोत्तम आधार माना है। इन तीन बातों के ही आधार पर क्यों सहायता प्रदान की जाये, इसे समझने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है। जो प्रान्त औद्योगिक समुन्नति में जितना ही आगे बढ़ चुका होगा उतना ही अधिक आयकर उस प्रान्त से वसूल होगा। पर उस प्रान्त द्वारा निर्मित वस्तुओं की सारी खपत उसी प्रान्त में नहीं होती है। उस प्रान्त के उद्योग-धन्धे उसी हालत में तरक्की कर सकते हैं जबकि देश के अन्य प्रान्तों के लोग उसकी वस्तुओं की खपत कर सकते हों। इसलिये कोई कारण नहीं है कि आयकर के प्रान्तीय अंश का वितरण संग्रह के आधार पर किया जाये। यह बहुत ही असन्तोषजनक पद्धति है।

इसके अतिरिक्त संघ-राज्य बनाने का यदि कोई प्रयोजन है, तो यही है कि सम्पन्न प्रान्तों की कुछ सम्पत्ति निर्धन प्रान्तों के पास पहुंचे। जिस तरह कि सामाजिक-कल्याण की कल्पना में यह सिद्धांत निहित है कि सम्पन्न लोगों की सम्पत्ति का कुछ अंश निर्धनों के पास जाना चाहिये, उसी तरह संघ-राज्य की कल्पना में अथवा राष्ट्रीय ऐक्य की कल्पना में यही सिद्धान्त निहित है कि सम्पन्न प्रान्त अपनी सम्पत्ति में से एक अंश, जो कि सिद्धान्त की दृष्टि से उनका है, निर्धन प्रान्तों के कल्याण के लिये दे दें। अगर ऐसा नहीं होता है तो अनुन्नत प्रान्तों को भाग्यशाली उन्नत प्रान्तों के स्तर पर लाना असम्भव होगा। उस हालत में तो इस बात की प्रत्याभूति देना भी सम्भव न हो सकेगा कि कम उन्नत प्रान्तों में सामाजिक सेवाओं का स्तर उतना ऊंचा जरूर होगा जितना कि कम से कम अपेक्षित है।

इसलिये उन कारणों से जिनका मैंने यहां जिक्र किया है, मैं यह समझता हूं कि श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन के प्रस्तावों को स्वीकार करना उन सिद्धान्तों के ही सर्वथा विपरीत है, जो संघ राज्य की स्थापना में सन्निहित है। यह सच है कि विशेषज्ञ समिति ने ऐसी सिफारिश जरूर की थी। पर उससे भी पहले जबकि भारत सरकार ने इस समिति के प्रस्तावों को अस्वीकार किया था मेरा इन प्रस्तावों से सर्वथा मत-विरोध था। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ था कि एक विशेषज्ञ समिति आयकर के प्रान्तीय अंश के वितरण के लिए ऐसे आधार का सुझाव दे रही है। वस्तुतः यह सन्तोष की बात है कि भारत सरकार ने इस समिति की सिफारिशों को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि इनको स्वीकार करने से वह बड़ी भयावह स्थिति में पड़ जाती।

अब चन्द शब्द मैं उन बातों के सम्बन्ध में कहूंगा, जो माननीय मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना के श्रीमुख से यहां निकले हैं। उन्होंने यह सुझाव दिया

है आय के साधनों का विभाजन प्रान्तों एवं केन्द्र के बीच संसद निर्मित विधि के अधीन होना चाहिये। मैं नहीं समझता कि उनका यह सुझाव कोई अच्छा सुझाव है। आस्ट्रेलिया में कामनवेल्थ-ग्रान्ट्स-कमीशन की स्थापना किसी संसदीय विधि के अधीन नहीं हुई है। वहां की केन्द्रीय सरकार तथा विभिन्न राज्यों के बीच हुये एक समझौते के फलस्वरूप यह कमीशन अस्तित्व में आया है। इसकी सिफारिशें तभी संसद् के समक्ष रखी जाती हैं जब केन्द्र और विभिन्न राज्य उनको मंजूर कर लेते हैं। यदि हम आय के साधनों का प्रान्तों और केन्द्र के बीच विभाजन करते हैं किसी संसदीय विधि के आधार पर, तो उससे केन्द्र एवं प्रान्तीय शासनों के आर्थिक सम्बन्ध में लचीलापन न रह जायेगा और एक अवांछनीय कठोरता आ जायेगी। मैं समझता हूं कि माननीय मित्र सक्सेना का यह कहना है कि वित्तायोग की जो भी सिफारिश हों उनको संसद् विधि द्वारा ही अमल में लाये। मैं नहीं समझ पाता कि ऐसा करना भला क्यों जरूरी है। अगर वित्तायोग इस तरह से प्रकार्य करता है कि जनता में उसके प्रति विश्वास भाव उत्पन्न हो जाता है, अगर प्रान्त तथा केन्द्र यह महसूस करते हैं कि इस आयोग के सदस्य किसी भी अधिकारी व्यक्ति की राय से प्रभावित नहीं होते, बल्कि उन्हें जो समुचित जंचता है उसी को राय देते हैं, तो मुझे इसमें रंचमात्र संदेह नहीं है कि यहां अपने देश में यह रूढ़ि चल पड़ेगी, जैसा कि आस्ट्रेलिया में है, कि वित्तायोग की सिफारिशों को अधिकांश रूप में केन्द्रीय सरकार मंजूर कर लेगी। मैं 'अधिकांश रूप में' शब्दों का प्रयोग यहां इसलिये कर रहा हूं कि हो सकता है कठिन समयों में केन्द्रीय सरकार के लिए यह सम्भव न हो कि वह वित्तायोग के दृष्टिकोण को मंजूर करे। पर मेरा ख्याल है कि आगे चलकर यथा समय यही होगा कि आपात की स्थिति को छोड़कर, साधारण अवस्था में केन्द्र एवं प्रान्त दोनों ही वित्तायोग पर विश्वास करने लग जायेंगे और उसके निर्णयों को मंजूर करने लगेंगे। आय साधनों को प्रान्त एवं केन्द्र में वितरित करने के लिए जो पद्धति मसौदे में सुझाई गई है वह मुझे अधिक लचीली, एक अच्छे सिद्धान्त पर आधृत और हर तरह से मान्य प्रतीत होती है; उस पद्धति की तुलना में जिसका सुझाव श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन ने अपने संशोधन के द्वारा उपस्थित किया है। व्यक्तिगत रूप से मेरा यही ख्याल है कि वित्तायोग को जो शक्तियां प्रदान की गई हैं वह आवश्यकता से अधिक व्यापक हैं। इतनी व्यापक शक्तियां उसे न दी जानी चाहियें। पर यह एक भिन्न ही मसला है और इस समय इस पर मैं विचार करना नहीं चाहता।

बहस-मुबाहिसे में भाग लेने में मेरा इतना ही उद्देश्य था कि सभा को यह स्पष्ट हो जाये कि श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन के संशोधन को स्वीकार करना बड़ा ही अवांछनीय होगा न केवल केन्द्र के हित में बल्कि अनुन्नत और असम्पन्न प्रान्तों के हित में भी। इस संशोधन के स्वीकृत होने से तो यह होगा कि आसाम, उड़ीसा तथा मध्यप्रान्त जैसे अनुन्नत प्रान्त जो धनाभाव से ही दीन दशा में पड़े हुये हैं, जिनकी अवस्था इतनी दयनीय है कि सभी समझदार आदमियों को उनके प्रति सहानुभूति होती है, हमेशा इसी पिछड़ी हुई हालत में पड़े रह जायेंगे; जिसमें उनको हम आज देख रहे हैं। अपना विकास करने के लिए और अपनी सामाजिक सेवाओं के स्तर को और ऊंचा उठाने के लिए इन प्रान्तों को और अधिक रकम मिल सकती है, तो वह उसी सूरत में मिल सकती है जबकि आयकर के वितरण के लिये संग्रह को आधार न बनाया जाये। इसलिये आशा है कि, श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन के संशोधन को सभा बिना किसी हिचकिचाहट के अस्वीकार कर लेगी।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): अब इस अनुच्छेद पर वोट ले लेना चाहिये।

***अध्यक्षः** पर इस सम्बन्ध में अब तक केवल एक ही सदस्य बोले हैं।

***श्री बी. दासः** अध्यक्ष महोदय, माननीय मित्र पंडित हृदयनाथ कुंजरू का मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं कि उड़ीसा और आसान की मुसीबतों पर आपने यहां इतना जोर दिया है। आयकर की जो रकम संग्रहीत की जाती है वह सब वित्त विभाग की मनमानी के कारण व्यर्थ के खर्च में ही नष्ट कर दी जाती है। विशेषज्ञ-समिति की यह सिफारिश है कि आयकर का—इसमें आयकर के सभी साधन जैसे अतिरिक्त कर, निगमकर शामिल हैं—60 प्रतिशत अंश प्रान्तों को मिलना चाहिये। संयुक्तप्रान्त के मुख्य मंत्री ने अपने स्मृत्तिपत्र में, जो उन्होंने विशेषज्ञ-समिति के समक्ष रखा था, इस बात पर जोर दिया था कि न केवल वैयक्तिक आयकर बल्कि सभी तरह के आयकर की आमदनी प्रान्तों में बंटनी चाहिये। विभिन्न प्रान्तों के मुख्य मंत्रियों ने यह उचित मांग पेश की है कि आयकर का 60 प्रतिशत अंश—कुछ लोगों ने 50 प्रतिशत की मांग की है पर मैं 60 प्रतिशत की ही मांग करता हूं जैसाकि विशेषज्ञ-समिति ने सिफारिश की है—प्रांतों को मिलना चाहिये। सवाल यह उठता है कि इसका वितरण किस आधार पर किया जाये। इसका वितरण संग्रह के आधार पर किया जाये या आबादी के आधार पर अथवा और किसी आधार पर। बम्बई से आयकर के रूप में सबसे बड़ी रकम संग्रहीत होती है क्योंकि अधिकांश कम्पनियों के हैड आफिस वहीं हैं। माननीय मित्र पंडित कुंजरू ने अभी यह कहा है कि बम्बई खपत करने वाला प्रान्त नहीं है। फिर भी बम्बई की यही इच्छा है कि संग्रह के आधार पर उसे कुछ प्रतिशत अंश मिल जाये ताकि मुफ्त में ही कुछ रकम वह पा जाये। श्री एन.आर. सरकार ने, जो संयोगवशात् आज पश्चिमी बंगाल के मुख्यमंत्री के पद पर हैं, यही समझकर के कि कितनी ही कम्पनियों के हेड आफिस कलकत्ता में अवस्थित हैं, यह सिफारिश की है कि आयकर का 30 प्रतिशत अंश संग्रह के आधार पर वितरित किया जाना चाहिये और 20 प्रतिशत अंश आबादी के आधार पर। वितरण की यह एक बहुत ही गलत पद्धति है और हम इसका विरोध करते हैं मुझे खुशी है कि माननीय मित्र पंडित हृदयनाथ कुंजरू ने इस विरोध का समर्थन किया है। उड़ीसा खासकर के आसाम, तथा बिहार जैसे अनुन्नत प्रान्तों के प्रतिनिधि यहां इस बात को कभी नहीं स्वीकार कर सकते हैं कि आयकर का कुछ भाग कई प्रान्तों को मुफ्त में मिल जाये, केवल इसलिये कि विदेशी शासकों ने अपने व्यवसाय एवं वाणिज्य सम्बंधी कार्रवाइयों का केन्द्र सिर्फ कलकत्ता और बम्बई को ही बना रखा था, वितरण की उस पद्धति को हम नहीं मानते हैं। मैं यह मांग करता हूं कि आयकर का 60 प्रतिशत, न कि वैयक्तिक आयकर का जैसा कि आजकल किया जाता है, प्रान्तों को मिलना चाहिये। दस प्रतिशत अंश भले ही केन्द्रीय सरकार अपने हाथ में रख ले इसलिये कि राज्य की किसी विशेष आवश्यकता की पूर्ति की जा सके। पर शेष 50 प्रतिशत अंश आबादी के आधार पर प्रान्तों में बंटना ही चाहिये। मैं यह बताऊं, श्रीमान् जो कतिपय रियासतें अभी हमारे प्रान्त में मिलाई गई हैं, उनके मिलाये जाने के पहले मेरे प्रान्त की जनसंख्या थी 90 लाख, पर आज इन रियासतों के मिल जाने पर उसकी जनसंख्या हो गई है 1 करोड़ 40 लाख। इन रियासतों

की प्रशासन-व्यवस्था पुराने जमाने की है, इनके करों के साधन भी वही पुराने जमाने के हैं। इनको अब उड़ीसा में मिला दिया गया है, सुतरां इनका शासन स्तर भी वही होना चाहिये जो प्रान्त का है। और फिर उड़ीसा की सरकार ने इस बात की गारण्टी दी है कि इन रियासतों में शासन का स्तर वहीं होगा जो प्रान्त में है। पर इन राज्यों से होने वाली आय बिल्कुल ही नगण्य सी है। आयकर के वितरण के सम्बन्ध में सर ओटो नेमर ने जो निर्णय दिया था, जिसके सम्बन्ध में आज अभी कुछ देर पहले मैं बोल चुका हूं, वह बिल्कुल मनमाना है। इस निर्णय के अधीन उड़ीसा को केवल 2 प्रतिशत मिलता था, पर बाद में चलकर भारत सरकार ने—मौजूदा भारत सरकार ने नहीं—इसे तीन प्रतिशत कर दिया और आयकर का यही तीन प्रतिशत उड़ीसा को मिलता है।

मुझे आश्चर्य है कि इस अनुच्छेद 251 की रचना में भारत सरकार का भी हाथ है। आज की परिवर्तित परिस्थितियों में इस सर्वसत्ताधारी सभा ने कितनी ही रियासतों की स्थिति बदल दी है। भारत सरकार के सदस्य, जो कि इस सभा के भी सदस्य हैं, क्यों नहीं मसौदा-समिति को राय देते हैं कि आयकर के वितरण की वर्तमान प्रणाली को वह बदल दे ताकि उड़ीसा जैसे प्रान्तों को, जिसे राज्यों के विलयन से दुहरी असुविधा हो गई है, आयकर से एक बराबर अंश मिल सके। बराबर-बराबर अंश प्रान्तों को तभी मिल सकता है जब आयकर का वितरण आबादी के आधार पर किया जाये।

पंडित हृदयनाथ कुंजरू तथा माननीय मित्र श्री विश्वनाथ का मैं कृतज्ञ हूं कि इन्होंने सन् 1947 की अदारकर-नेहरू रिपोर्ट का यहां जिक्र किया। यह रिपोर्ट छप तो गई थी काफी पहले, पर जनता के प्रकाश में आई सन् 1949 के मार्च में। इसे सरसरी निगाह से देख पाने का ही मुझे मौका मिल पाया है—आखिर सरकार ऐसी वजनी रायों और महत्वपूर्ण विचारों में क्यों मीनमेख निकालती है और उन्हें क्यों टालती है? क्यों नहीं वह इस पर देश को राय जाहिर करने का मौका देती है या इस सभा में ही उस पर बहस का मौका क्यों नहीं देती है? मेरा ख्याल है कि जब तक भारत सरकार को इस मसले पर जानकारी हासिल नहीं होती है और वह लूट-खसोट की नीति बरतती है, इस दिशा में कुछ भी नहीं किया जा सकता है। प्रान्तों के विकास की जो समस्या है उसका समाधान हमें अदारकर-नेहरू रिपोर्ट में मिलता है। वह प्रान्त जो अनुन्नत हैं, पिछड़े हुये हैं, उनको विशेष अनुदानों के द्वारा जैसा कि आस्ट्रेलिया में किया जाता है, अधिक साहाय्य मिलना चाहिये। फी व्यक्ति की आमदनी के आधार पर अनुन्नत प्रान्तों को आर्थिक अनुमान प्राप्त होने चाहिये। क्या भारत सरकार के प्रतिनिधियों का यहां यह कर्त्तव्य नहीं है कि सभा पर विश्वास रखें और उसे यह बतायें कि उनके मन में क्या बात है? क्या उनका दिमाग ही बिल्कुल शून्य है या यह बात है इन दो वर्षों से वह इस मसले पर विचार करते आ रहे हैं पर अभी तक किसी निर्णय पर नहीं पहुंच पाये हैं?

सरकार समिति के समक्ष जो स्मृतिपत्र भारत सरकार ने उपस्थित किया था उसे मैंने पढ़ा है, श्रीमान् यह एक सर्वथा हृदयहीन और निष्प्राण स्मृतिपत्र है इसमें अपनी ही कठिनाइयों का केन्द्र ने रोना रोया है। इसमें यह सोचा ही नहीं गया है कि केन्द्रीय सरकार के अर्थ विभाग पर समस्त भारत एवं उसके सभी प्रान्तों

[श्री बी. दास]

की आर्थिक व्यवस्था की गम्भीर राजकीय जिम्मेदारी है। इन लम्बे स्मृतिपत्र में इस बात का कहीं भी और कोई भी उल्लेख नहीं है कि प्रान्तों की समुन्नति होनी चाहिये, उन्हें आय के और साधन प्राप्त होने चाहियें और आयकर से उन्हें और बड़ा अंश मिलना चाहिये, ताकि वे अपना विकास कर सकें। अगस्त सन् 1947 के पूर्व जो विदेशी अंग्रेज शासक यहां शासन करते थे उन्होंने भी कभी ऐसा निर्दय लेख (document) नहीं तैयार किया था। सन् 1936-37 का स्मृतिपत्र मैंने देखा है। सन् 1924 और 1925 में यहां नौकरशाही के शासकों ने अर्थ-विभाग के स्वेच्छाचारी अधिकारियों ने जो नोट पेश किये थे उन्हें भी मैंने देखा है। पर सरकार समिति के समक्ष जो स्मृतिपत्र भारत सरकार ने उपस्थित किया था वह इन सब से हृदयहीन एवं निर्दयी है। अवश्य ही 1924 और 1925 में भारत सरकार के अर्थ-विभाग ने जो कुछ लिखा था, वह भी एक बड़ा ही हृदयहीन लेख था और यह नपी तुली राय है अपने स्वतन्त्र भारत के अर्थ-विभाग की, जो आज प्रान्तों के आय-साधनों को बर्बाद कर रहा है और प्रान्तीय अर्थ-मंत्रियों को प्रभाव से दबा रखा है, इस शासन को मैं एक निर्लज्ज शासन कहता हूं। मैं फिर कहता हूं कि यह एक निर्लज्ज शासन है ओर आज हमारे गरीब प्रान्तों को, प्रान्तों के बेचारे मुख्य मंत्रियों को अपने मामले के लिये तर्क-वितर्क करना पड़ता है, अपनी गरीबी और पिछड़ी हुई हालत को प्रमाणित करने को बहस करनी पड़ती है। अवश्य ही बम्बई को यह सब दिक्कत नहीं उठानी पड़ती है। बम्बई इस जिल्लत में क्यों पड़ेगा जब वहां फी आदमी की आय है 25 रुपये? मद्रास क्यों आर्थिक साहाय्य पाने के लिए तर्क-वितर्क करेगा, जब वहां की आदमी की आमदनी है 19 रुपये। यही बात संयुक्तप्रान्त के साथ है, जिसकी आमदनी फी व्यक्ति 21 रुपये है। पर हमारा उड़ीसा प्रान्त गरीब है, वहां फी आदमी चार या पांच रुपये की आमदनी कर पाता है, इसलिये हमें तो अधिक साहाय्य मांगना ही पड़ेगा ताकि हम किसी तरह औरों के स्तर के समीप तो पहुंच सकें। आसाम विभाजन के बाद आज बहुत ही कम व्यय करता है। क्या इस सर्वसत्ताधारी सभा का यह कर्तव्य नहीं है कि वह इस बात को सुनिश्चित बनाये कि इन प्रान्तों को अपनी समुन्नति के लिए पर्याप्त रकम प्राप्त होगी, इनको इतना जरूर मिलेगा जो इनकी आवश्यकताओं के लिये कम से कम जरूरी होगा? यह तभी हो सकता है जब कि आयकर का 60 प्रतिशत अंश प्रान्तों में आबादी के आधार पर वितरित किया जाये न कि अन्य किसी आधार पर।

***अध्यक्ष:** पेश्तर इसके कि डॉ. अम्बडेकर इस अनुच्छेद पर बोलें, एक बात मेरे ध्यान में आई है, जिस पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यहां कुछ स्पष्टीकरण अपेक्षित है। मैं चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस पर विचार करें। अनुच्छेद 251 के खण्ड (2) में यह कहा गया है:-

> "Such percentage, may be prescribed, of the net proceeds in any financial year of any such tax, except in so far as these proceeds represent proceeds attributable to States for the time being specified in Part II of the First Schedule or the tax payable in respect of Union emoluments,

shall not form part of the revenues of India, but shall be assigned to the States within which that tax is leviable in that year, and shall be distributed among those States in such manner and from such time as may be prescribed."

[किसी वित्तीय वर्ष में किसी ऐसे कर के शुद्ध आगम का, जहां तक वह आगम प्रथम अनुसूची के भाग (2) में उल्लिखित राज्यों में से अथवा संघ उपलब्धियों के सम्बन्ध में देय करों से मिला हुआ आगम माना जाये, वहां तक के सिवाय ऐसा प्रतिशत भाग, जैसा विहित किया जाये, भारत के राजस्व का भाग न होगा, किन्तु उन राज्यों को सौंपा जायेगा जिनके भीतर वह कर उस वर्ष उद्ग्रही होना है, तथा वह उन राज्यों को उस रीति से और उस समय से, जो विहित किया जाये, वितरित होगा।]

यहां यह जो पद-संहति रखी गई है: "States within which that tax is leviable in that year" इसका क्या मतलब है यह मेरी समझ में नहीं आ पाया। क्या इससे अभिप्रेत है वह राज्य जहां करदाता रहते हैं या इसका मतलब उन राज्यों से है जहां वह आमदनी हुई है जिस पर आयकर लगाया है या कुछ और ही मतलब है?

***श्री बी. दास:** जब यहां इन वित्त सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार हो रहा हो उस समय यहां सभा-भवन में अर्थ-मंत्री का उपस्थित रहना नितान्त आवश्यक है क्योंकि वह इस सभा के भी सदस्य हैं। यहां हम कोई सैद्धान्तिक वाद-विवाद नहीं कर रहे हैं कि अर्थ मंत्री का उपस्थित रहना जरूरी नहीं है।

***अध्यक्ष:** मुझे विश्वास है कि माननीय सदस्य की इस इच्छा को अर्थ मंत्री तक अवश्य कोई सज्जन पहुंचा देंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं यह बताना चाहता हूं, श्रीमान्, कि प्रस्तुत अनुच्छेद के ये शब्द भारत-शासन-अधिनियम 1935 की धारा 188 से करीब ज्यों के त्यों ले लिये गये हैं। इस समय मैं इतना ही कह सकता हूं कि कर के उस भाग के लिये ही यह व्यवस्था है, जो भाग 3 के उन राज्यों में संग्रहीत किया जायेगा, जिन्होंने संघ-शासन के साथ इस बारे में विशेष प्रबन्ध कर लिया है।

***श्री विश्वनाथ दास:** मैं आपसे यह अनुरोध करूंगा, श्रीमान्, कि अर्थ मंत्री को जो कि इस सभा के भी सदस्य हैं यह संवाद मिल जाना चाहिये कि वह अर्थ मंत्री की हैसियत से नहीं बल्कि सभा के एक सदस्य के नाते यहां उपस्थित रहें, ताकि उनके बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श और सलाह से हम सब लाभान्वित हो सकें।

***अध्यक्ष:** इसलिये तो मैंने अभी यह कहा है कि माननीय सदस्य की इच्छायें उन तक सम्भवत: पहुंचा दी जायेंगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अब मैं उस बात को यहां समझा सकता हूं, किन्तु वैसा करने से पहले मैं संशोधन को लूंगा।

इन अनुच्छेद पर एक संशोधन तो श्री बर्मन का है और दूसरा संशोधन है प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का। मुझे खेद है, मैं इन दोनों में से किसी को भी नहीं स्वीकार कर सकता।

यह प्रश्न कि आयकर के रूप में संग्रहीत आगम के किसी प्रतिशत अंश को, 60 प्रतिशत को या अन्य किसी प्रतिशत अंश को, संविधान द्वारा ही विहित कर दिया जाये या उसे राष्ट्रपति पर छोड़ दिया जाये, एक ऐसा विषय है जिस पर उस सम्मेलन में, जो कि इस मसले पर विचार करने के लिये अभी हाल में हुआ था, केन्द्र की तथा प्रान्तों की सरकारों ने, दोनों ने ही, काफी विचार किया था। वहां यह तय पाया गया था कि सर्वोत्तम यह होगा कि इस प्रश्न को राष्ट्रपति पर छोड़ दिया जाये और संविधान द्वारा एतदर्थ कोई अनुपात न विहित किया जाये।

दूसरा सवाल जो प्रो. शिब्बनलाल ने उठाया है कि 'Prescribed' शब्द की जगह 'Prescribed by Parliament' शब्द रखे जायें, इसके सम्बन्ध में भी मुझे यह खेद है कि मैं इसे नहीं स्वीकार कर सकता। हमारी योजना ही यह है कि पहले तो राष्ट्रपति ही स्वयं इस अनुपात को विहित करे और बाद में आगे चलकर वित्तायोग की सिफारिशों पर विचार करते हुये वह इस अनुपात को विहित करे। हम इस मसले में संसद् को लाना ही नही चाहते हैं। क्योंकि संसद् के निर्णयाधीन अगर यह मसला रखा जाता है तो भिन्न-भिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधियों में बहुत झगड़ा होगा और सम्भव है कोई बहुत अन्यायपूर्ण निर्णय संसद् में हो जाये क्योंकि वहां कुछ प्रान्तों को प्रबल बहुमत प्राप्त रहेगा और कुछ प्रान्तों के बहुत ही कम प्रतिनिधि होंगे। इसलिये इस प्रश्न को संसद् पर छोड़ने का व्यवहारिक रूप से यही अर्थ होगा कि उस प्रश्न को हम उन प्रान्तों की मरजी पर छोड़ रहे हैं जिनको केन्द्रीय विधान-मण्डल में समधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त है। हम सब यह चाहते हैं कि सभी प्रान्तों के साथ न्याय हो, पर ऐसी व्यवस्था से तो न्याय की जड़ पर ही कुठाराघात हो जायेगा।

अब मैं उस कठिनाई की ओर आता हूं जिसका जिक्र आपने उठाया है: "States within which that tax is leviable in that year" शब्दों का यहां होना आवश्यक है। ये शब्द भारत शासन-अधिनियम 1935 में आये हैं। ये शब्द वहां क्यों रखे गये थे, इसका कारण यह था कि आयकर को उन रियासतों में लगाना नहीं था, जो भारतीय संघ में आने वाली थीं। आयकर के बदले रियासतों को अंशदान के रूप में कुछ देना जरूरी रखा गया था। इसलिये अगर किसी राज्य में आयकर नहीं आरोपित किया जाता है, तो उस राज्य को आयकर की आमदनी का अंश पाने का अधिकार नहीं रहता है। पता नहीं वर्तमान संविधान के अधीन इस सम्बन्ध में क्या पद्धति बरती जायेगी। इस मसले पर एक समिति छानबीन कर रही है, जो भारतीय रियासतों के आर्थिक साधनों का पता लगाने के लिए नियुक्त की गई है। अगर यह समिति यह सिफारिश करती है कि सभी राज्यों में आयकर लगाना चाहिये, चाहे वे राज्य पहले प्रान्त के रूप में या चाहे रियासत के रूप में हों, तो स्वाभाविक है कि इन शब्दों को हमें बदल देना होगा। इस अनुच्छेद को प्रस्तावित करता हूं, पर मसौदा-समिति को यह अधिकार जरूर रहेगा कि उक्त समिति की

रिपोर्ट आ जाने पर वह इस सम्बन्ध में कोई संशोधन रख सकती है। यही कारण है जिसके लिये यह शब्द यहां रखे गये हैं।

***अध्यक्षः** इस सम्बन्ध में केवल एक बात और पूछनी है। तो क्या मैं यह समझ लूं कि ब्रिटिश भारत के नाम से ज्ञात प्रदेशों पर इस व्यवस्था को लागू करने के अभिप्राय से ही यह पदसंहति रखी गई है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** नहीं, नहीं भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के लिये।

***श्री बी. दासः** डॉ. अम्बेडकर ने अभी इस सम्मेलन में होने वाले वाद-विवाद का उल्लेख किया है, जिसमें प्रान्तों के मुख्य-मंत्री तथा मसौदा-समिति के सदस्यों ने भाग लिया था। सभा को यह ज्ञात नहीं है कि मुख्य-मंत्रियों और मसौदा समिति के बीच क्या बातें हुईं और कि निर्णय पर वह पहुंचे। जब तक कि सभा में यहां सदस्यों की मेज पर सम्मेलन की कार्रवाई का विवरण नोट के रूप में या अन्य किसी शकल में नहीं रखा जाता है, मसौदा-समिति के कार्यों के सम्बन्ध में कोई निर्णय नहीं कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** मैं यह मानता हूं कि अगर किसी भी मुख्य मंत्री ने कोई आपत्ति सम्मेलन में उठायी होती तो वह यहां भी अपनी आपत्ति अवश्य पेश करता, अगर मसौदे से वह असहमत होता। इसलिये मैं यही समझता हूं कि जो मसौदा सभा के समक्ष उपस्थित है उस पर सभी मुख्य मंत्री सहमत हैं।

***श्री बी. दासः** मुख्य मंत्रियों ने तथा अर्थ-मंत्रियों ने इस सभा से बाहर आपस में क्या फैसला किया उसे मानने के लिए यह सभा बाध्य नहीं है। अगर उन लोगों ने कोई फैसला किया ही था, तो सभा के सदस्यों के सामने उस फैसले की प्रतियां अवश्य पेश होनी चाहियें। सभा को इसका विशेषाधिकार प्राप्त है।

***अध्यक्षः** मसौदा-समिति और मुख्य-मंत्रियों ने जो भी फैसला किया हो, उसे मानने के लिए यह सभा बाध्य नहीं है। सदस्यों को इस बात की स्वतन्त्रता है कि जिधर चाहें अपना मत दें।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः** मैं एक बात के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर से स्पष्टीकरण चाहता हूं। वह बात यह है। अनुच्छेद में यह कहा गया है कि आगम का वितरण राज्यों में उस समय से और उस रीति से किया जायेगा जैसा कि विहित किया जाये। 'विहित' शब्द का अर्थ इस अनुच्छेद के खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) में यह किया गया है कि "जब तक वित्त-आयोग गठित न हो जाये, तब तक राष्ट्रपति के आदेश द्वारा विहित और वित्त आयोग के गठित हो जाने के पश्चात्, वित्त-आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात्, राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित"। वित्त-आयोग अस्तित्व में आयेगा आगे चलकर। जैसाकि अब तक निश्चित हुआ है, प्रस्तुत अनुच्छेद के खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) (2) में उल्लिखित वित्त-आयोग की नियुक्ति होगी संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष के बाद। संविधान के प्रवर्तन में आने पर, इस दो वर्ष की अवधि तक किस

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

आधार पर आप आयकर का वितरण करेंगे? माननीय प्रधान मंत्री ने अभी हाल में यह बताया था कि वित्त-आयोग के अतिरिक्त एक अन्य आयोग-चाहे इसे आयोग कहा जाये या समिति कहा जाये या जो भी नाम दिया जाये-नियुक्त किया जायेगा जो तदर्थ-समिति (Ad hoc Committee) के रूप में होगा। फिर इसका यहां कैसे मेल खायेगा? उपखण्ड (ख) में प्रयुक्त 'विहित' का अर्थ यह तो नहीं होगा कि राष्ट्रपति इस समिति की सिफारिशों के आधार पर एतदर्थ आदेश देगा। तब क्या इस अन्तर्वर्ती काल में आयकर का वितरण फाइनांस कमेटी की सिफारिशें के आधार पर किया जायेगा? यह साफ नहीं हो पाया है कि संविधान के प्रारम्भण के बाद जब तक वित्त-आयोग गठित नहीं हो जाता है, उस मध्यकालीन अवधि में वितरण के लिए क्या व्यवस्था बरती जायेगी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यह तो एक सीधी सी बात है। अगर हम यही चाहते होते कि राष्ट्रपति वितरण के लिए आदेश दे उसके पहले इस सम्बन्ध में कोई छानबीन न होनी चाहिये तो हम केवल इतना ही यह लिख देते कि संविधान के प्रारम्भण के पूर्व जिस रूप में उसका वितरण किया जाता था उसी रूप में संविधान के प्रारम्भण के बाद उस अवधि तक इसका वितरण किया जायेगा जब तक कि वित्त आयोग की सिफारिश के आधार पर राष्ट्रपति एतदर्थ कोई आदेश न दे दे। पर हमने जानबूझकर यह बात यहां नहीं रखी है क्योंकि हम चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में पहिले छानबीन कर ली जाये और तब उस छानबीन के आधार पर राष्ट्रपति जो आदेश दे उसके हिसाब से आयकर की रकम वितरित की जाये।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र:** तो मतलब यह है कि मध्यवर्ती अवधि में किस हिसाब से इसका वितरण किया जाये इसकी छानबीन के लिये एक आयोग अभी से गठित कर दिया जायेगा और उसकी सिफारिशों पर विचार करके राष्ट्रपति आदेश द्वारा जैसा विहित करे उसी तरह वितरण किया जायेगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** हां, यही मतलब है। अन्यथा हम यही कह देते कि जब तक राष्ट्रपति नया आदेश न निकाले तब तक वितरण की वर्तमान व्यवस्था चालू रहेगी।

***अध्यक्ष:** अब मैं विभिन्न संशोधनों पर सभा का मत लेता हूं। पहले मैं संशोधन नं. 2858 पर राय लूंगा जिसे श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन ने पेश किया है।

***श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन:** डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के वक्तव्य को ध्यान में रखते हुये मैं अपने संशोधन को वापस ले लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं, डॉ. अम्बडेकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन नं. 75 पर मत लेता हूं। यह केवल शाब्दिक संशोधन है।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (2) में 'revenues of India' शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब श्री टी.टी. कृष्णमाचारी का संशोधन लिया जाता है।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (4) के उपखण्ड (ग) में 'revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन पर राय ली जायेगी।

प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधन-सूची के संशोधन नं. 2875 के स्थान पर निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:-

"कि अनुच्छेद 251 के खण्ड (4) के उपखण्ड (ख) (2) में 'by the President by order' शब्दों की जगह 'by Parliament by law' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधित अनुच्छेद 251 पर राय लेता हूं।

प्रस्ताव यह है:-

"कि अनुच्छेद 251, संशोधित रूप में, संविधान का अंग समझा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 251 अपने संशोधित रूप में, संविधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 252

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 252 को लेते हैं। पर दो नये अनुच्छेदों को-251क और 251ख-रखने का प्रस्ताव आया है। क्या आप इन दोनों अनुच्छेदों को यहां अभी उपस्थित करना चाहते हैं मिस्टर कृष्णमाचारी?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** नहीं।

***अध्यक्ष:** तब हम अनुच्छेद 252 को लेते हैं। इस पर एक संशोधन आया है श्री सन्तानम् के नाम में जिसका नं. है 2881।

(संशोधन नं. 2881 और 2882 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** तो अब लिया जाता है संशोधन नं. 79 जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** यह भी मेरे ही नाम में है श्रीमान्। कृपया, इसे उपस्थित करने की मुझे अनुमति दे। मेरा संशोधन यह है:–

"कि अनुच्छेद 252 में 'revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

***अध्यक्षः** कोई सदस्य इस संशोधन के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं? *(कोई सदस्य नहीं खड़ा हुआ)* तो मैं संशोधन नं. 79 पर सभा की राय लेता हूं।

संशोधन यह है:–

"कि अनुच्छेद 252 में 'revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित अनुच्छेद पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है:–

कि अनुच्छेद 252, संशोधित रूप में, संविधान का अंग समझा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 252, अपने संशोधित रूप में संविधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 253

***अध्यक्षः** अब हम अनुच्छेद 253 को लेते हैं।

(संशोधन नं. 2883 और 2884 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** संशोधन नं. 2885 का क्या होगा? क्या आप उसे पेश करना चाहते हैं डॉ. अम्बेडकर?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बडेकरः** इसे मैं नहीं पेश करूंगा, बल्कि श्री त्यागी इसे पेश करेंगे।

(नं. 2886 से 2896 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** श्री बारदोलोई, आप अपने संशोधन नं. 2897 को पेश कर रहे हैं क्या?

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोईः** (आसाम : जनरल): मैं इस संशोधन को तो नहीं पेश करना चाहता हूं पर इस अनुच्छेद पर जरूर बोलना चाहता हूं।

(नं. 2898 से 2902 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): मैंने भी एक संशोधन भेज रखा था, श्रीमान्।

***अध्यक्ष:** सभी संशोधन खत्म नहीं हुये हैं। मैं उनको क्रम से ले रहा हूं। आपका संशोधन तो आगे चलकर आयेगा। संशोधन नं. 81।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान् कि:–

"अनुच्छेद 253 के खण्ड (2) में 'revenues of India' शब्दों की जगह 'Consolidated Fund of India' शब्द रखे जायें।"

***अध्यक्ष:** अब आता है संशोधन नं. 214 जो श्री महावीर त्यागी के नाम में है।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं यह संशोधन प्रस्तावित करता हूं श्रीमान:

"कि संशोधन-सूची के संशोधन नं. 2886 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 253 के खण्ड (1) को हटा दिया जाये।"

अनुच्छेद 253 के खण्ड (1) में यह कहा गया है श्रीमान्:

"नमक पर संघ कोई कर न लगायेगा।"

नमक सत्याग्रह के महान् आन्दोलन में मैंने भी भाग लिया था श्रीमान् और इस दलील को तब भी मैं ठीक समझता था और आज भी ठीक समझता हूं कि नमक कर का असर गरीब आदमियों की आय पर पड़ता है सुतरां यह कर न लगना चाहिये। इस सम्बन्ध में आज भी मेरी वही राय है जो आन्दोलन के समय थी। मैं उसे भी स्वीकार करता हूं कि इसी अनुभूति से प्रेरित होकर ही अधिकांश सदस्यों ने नमक कर न लगाने का यह खण्ड संविधान में रखना पसन्द किया है। किन्तु बात यह है कि श्रीमान्, कि नमक पर कर लगाना या न लगाना संसद् का काम है। हम यहां समवेत हुये हैं संविधान सभा के रूप में। इस खण्ड को रखने पर मैं यहां आपत्ति करता हूं। इसलिय नहीं कि मैं यह चाहता हूं कि नमक पर कर लगाया जाये बल्कि इसलिये कि मैं यह नहीं चाहता हूं कि संविधान में इस खण्ड को स्थान देकर हम भावी पीढ़ियों का हाथ सदा के लिये बांध दें। अगर हम इस खण्ड को संविधान में रख लेते हैं तो फिर शताब्दियों तक नमक पर कर न लगाया जा सकेगा। जब तक दूसरी संविधान सभा नहीं बनती सरकार का हाथ बंधा रह जायेगा। चाहने पर भी और ऐसी स्थिति आने पर भी जिसमें नमक पर कर लगाना आवश्यक हो जाये, सरकार नमक पर कर न लगा सकेगी। यह एक ऐसी बात है जिससे हमें बचना चाहिये। यही कारण है जो मैं अपने संशोधन को स्वीकार करने की सभा में सिफारिश करता हूं।

देश विभाजन के बाद, अब वर्तमान समय में हमारा अधिकांश नमक विदेशों से ही आता है। सन् 1948-49 में हमने पाकिस्तान से करीब 40 हजार टन, मिश्र से करीब 25 हजार टन और अन्य देशों से लगभग 34 हजार टन नमक मंगाया है। आयात-निर्यात के बारे में देशों में समझौते हुआ करते हैं हो सकता है कि किसी समय पाकिस्तान सम्बन्धी अपनी आयात-निर्यात समस्या पर विचार

करते समय अपनी किसी भावी सरकार को यह महसूस हो कि पाकिस्तान से आने वाले नमक पर कर लगाना आवश्यक है। यह भी सम्भव है कि देश के नमक उद्योग को विदेश की प्रतिद्वंद्विता से रक्षण देने के लिए, विदेश से आने वाले नमक पर कर लगाना जरूरी हो जाये। इस कर में और भी कई लाभ हैं। यह एक सीधा सा प्रश्न है श्रीमान्, और मैं नहीं चाहता हूं कि इस पर ज्यादा बोलूं और इस प्रश्न पर जोर देकर सभा का समय बर्बाद करूं। मैं सिर्फ यही चाहता हूं भावी पीढ़ियों का, भावी संसदों का हाथ बंधा न रहे, उनको इसकी स्वतन्त्रता रहे कि जैसा चाहें करें। अगर आज हमारी संसद् इस बात पर विचार करती है कि नमक कर लगाया जाय या नहीं तो अन्य मित्रों की तरह मैं भी वहां नमक पर कर लगाने का जबरदस्त विरोध करूंगा। हमने अभी हाल ही में इस आय का परित्याग किया है और जानबूझकर ऐसा किया है। इस मद में 9 या 10 करोड़ से कम आय नहीं होती थी। सिद्धान्त के लिए 9 करोड़ का त्याग हम कर चुके हैं। पर अगर आगे चलकर कभी सरकार यह महसूस करे कि अन्य किसी प्रत्यक्ष कर लगाने के बजाय नमक पर कर लगाना ही ज्यादा अच्छा है, तो मैं कहूंगा कि उसको इस बात की स्वतन्त्रता रहनी चाहिये कि इस मद से वह आय उठा सके। इन शब्दों के साथ मैं संशोधन की सिफारिश करता हूं और यह आशा करता हूं कि सभा मेरी बातों का गलत अर्थ न लगायेगी। यद्यपि यह संशोधन स्पष्ट है कि बड़ा अप्रिय ही प्रतीत होता है पर मैं इस बात को स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि इस संशोधन से मेरा यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि मैं यह चाहता हूं कि सरकार नमक पर कर लगाये। यहां कर लगाने या न लगाने की बात नहीं है। बात केवल यही है कि भावी सरकारों के लिये अपने विवेक के प्रयोग का रास्ता न बन्द हो जाये। बात केवल इतनी ही है। आशा करता हूं कि सभा यहां भावुकता से ऊपर उठेगी और अपनी स्वतन्त्र राय देगी। जिस तरह इस सम्बन्ध में आज हम स्वतन्त्र हैं उसी तरह भावी सरकारों को भी यह स्वतन्त्रता प्राप्त रहनी चाहिये।

***अध्यक्षः** अब आता है संशोधन नं. 215। आप इसे पेश कर रहे हैं श्री बारदोलोई?

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोईः** मैं इस संशोधन को नहीं पेश करना चाहता हूं श्रीमान्, पर जैसाकि मैंने अभी कहा है, इस अनुच्छेद पर मैं जरूर बोलना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** ठीक है, पर पहले सब संशोधन तो पेश हो जायें। संशोधन नं. 216 को पेश करना है या नहीं?

***माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय** (आसाम : जनरल): इसे नहीं पेश करना चाहता हूं, पर अनुच्छेद पर बोलने की इच्छा जरूर है।

***अध्यक्षः** संशोधन नं. 217।

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोईः** यह तो उसी का एक अंश है।

***अध्यक्षः** बस इतने ही संशोधन हैं। अब श्री बारदोलोई बोल सकते हैं।

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई:** अध्यक्ष महोदय, मसौदे के अनुच्छेद 253 के सम्बन्ध में चन्द बातें कहने के लिए मैं खड़ा तो हो रहा हूं पर मन में बड़ी आनाकानी चल रही है। अस्तु, सर्वप्रथम इस अवसर पर मैं मसौदा-समिति के सभापति तथा उसके सदस्यों को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने इस प्रश्न पर तथा अन्य प्रश्नों पर परस्पर विचार करने का मुख्य मंत्रियों को मौका दिया और व्यक्तिगत रूप से मुझे इस बात का मौका, मैं उनसे साक्षात्कार कर आसाम प्रान्त की खास-खास कठिनाइयों को समझा सकूं। जो कुछ उन्होंने संविधान में इस सम्बन्ध में रखा है उससे मैं यद्यपि सन्तुष्ट नहीं हूं पर उन्होंने जो सौजन्य प्रदर्शित किया है उसके लिये अवश्य ही मैं उनका आभारी हूं। इस सम्बन्ध में, मैं इस बात का भी उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता श्रीमान्, कि अर्थ सम्बन्धी प्रबन्धों के बारे में जो कतिपय प्रश्न मैंने उठाये थे उनका उत्तर देने में माननीय अर्थ मन्त्री महोदय ने बड़ी ही शिष्टता का व्यवहार किया था और इसके लिये मैं उनका परम आभारी हूं।

अब, मैं समझता हूं कि अगर यहां इस सभा के समक्ष मैं अपने प्रान्त की वास्तविक आर्थिक कठिनाइयों को नहीं रखता हूं, उसने सदस्यों को नहीं परिचित कराता हूं तो मेरा अपने प्रति जो कर्तव्य है, जनता के प्रति जो कर्त्तव्य है, उसके पालन में मैं चूक करूंगा। संक्षेप में आसाम की आर्थिक स्थिति यह है कि उसके सामने गम्भीर अर्थ संकट है और जब तक कि इसे कठिनाई के दलदल से निकालने के लिए भारत सरकार कोई अल्पकालिक व्यवस्था नहीं करती है और संविधान द्वारा कोई एक दीर्घकालीन व्यवस्था नहीं की जाती है उसका भविष्य सर्वथा अन्धकारमय है। मैं इस मसले पर विशेष रूप से जोर इसलिये दे रहा हूं कि इस प्रान्त की अपनी खास कठिनाइयां हैं, आज यह भारत का सीमावर्ती प्रान्त है, आज यह भारत के पूर्वी द्वार पर एक संरक्षक के रूप में अवस्थित है।

जिन आर्थिक प्रबन्धों को लेकर प्रान्त को इतनी कठिनाइयां भुगतनी पड़ रही हैं, उनके इतिहास की चर्चा करने में मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता। सन् 1919 से ही प्रान्त की यह मुसीबत चली आ रही है कि आर्थिक प्रबन्ध की व्यवस्था करने में उसके साथ और अन्याय किया गया। सन् 1919 में, यद्यपि प्रान्त में सामाजिक सेवाओं की कोई भी व्यवस्था न थी, यहां तक कि स्कूल जाने वाले विद्यार्थियों के दस प्रतिशत अंश को भी आरम्भिक विद्यालयों में पढ़ने का मौका नहीं मिल पाता था। उस समय भी मेस्टन निर्णय के अधीन यह प्रान्त केन्द्र को 15 लाख की रकम देने के लिए बाध्य था। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रान्त की आर्थिक व्यवस्था टूट-फूट गई और सात या आठ साल के अन्दर ही समूची व्यवस्था को बदलना पड़ा। मेरा ख्याल है कि सन् 1927 में या 28 में सर अलेक्जैण्डर मुडीमैन ने उस व्यवस्था में परिवर्तन किया और आसाम को जो प्रति वर्ष 15 लाख केन्द्र को देना पड़ता था उससे प्रान्त को बरी कर दिया। शीघ्र उसके बाद ही आर्थिक व्यवस्था में पुन: परिवर्तन करने का विचार किया गया था पर वही पहिले वाली व्यवस्था ही चलती रही और इस तरह वह समय आ गया जब भारत शासन अधिनियम 1935 के अधीन बनने वाले नये संविधान की रूप रेखा क्या हो इसकी चर्चा देश में सर्वत्र चलने लगी। उस समय परसी कमेटी ने यह सोचा कि चालू प्रबन्ध को, जिसके अधीन कि आसाम को बड़ी

[माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई]

ही कठिनाइयां उठानी पड़ती थीं, बदल देना चाहिये और इस प्रान्त के साथ न्याय होना चाहिये। सर ओटीनमर के निर्णय तक पहुंचने में क्या-क्या बातें हुईं और किन स्थितियों से हम गुजरे इसकी चर्चा कर मैं आपका समय नहीं बर्बाद करना चाहता। सर ओटोनमर के निर्णय से बस इतना ही हुआ कि आसाम को 30 लाख की सहायता मिल गई। इसका नतीजा यह हुआ कि प्रान्त की जो स्थिति सन् 1919 में थी वही अब भी बनी रही। जो आय उपलब्ध होती थी उससे किसी तरह की भी सामाजिक सेवा का प्रबन्ध नहीं किया जा सकता था और न कोई ऐसी शिक्षण संस्था की ही स्थापना की जा सकती थी जिसको शिक्षण संस्था कहना सार्थक होता। और मेरा ख्याल है कि तत्कालीन सरकार को इन बातों के लिए कोई फिक्र भी नहीं थी। उस समय चाय की खेती करने वाले गोरों का वहां राज था। विदेशी शासन का यह उद्देश्य ही नहीं हो सकता था कि जनता को शिक्षित बनाये। जबकि बिना शिक्षा के और बिना किसी सामाजिक सेवा की व्यवस्था के ही, जिस पर कि खर्च उठाना पड़ता, सारी बातें ठीक-ठीक शान्ति-पूर्वक चल जाती थीं तो उन्होंने यही सोचा कि इसी तरह व्यवस्था आगे भी चलती रहेगी।

देश विभाजन के पूर्व आसाम की यही स्थिति थी। वहां के बजट में हमेशा घाटा ही चलता रहा, सिवा उन युद्ध के दो सालों के जबकि पेट्रोल वगैरह पर बिक्री कर लग जाने से कुछ आमदनी हो गई थी जिससे हर साल करीब एक करोड़ से कुछ ज्यादा रकम मिल गई थी किन्तु फिर भी इन तमाम वर्षों में प्रान्त के बजट में घाटा ही रहा है यद्यपि, जैसा मैं अभी कह चुका हूं, वहां सामाजिक सेवायें बिल्कुल ही नहीं थीं और न कोई शिक्षण संस्थायें ही थीं जहां हमारे बच्चों को शिक्षा मिल पाती, और समुन्नति के सभी काम रुके हुये थे। यह स्थिति थी प्रान्त की देश विभाजन के पहले। विभाजन से तो हम पर एक जबरदस्त जिम्मेदारी आ गई है जिसे, आशा है, यहां सभी महसूस करते हैं। हमारा प्रान्त देश से अलग पड़ गया है। यह सच है कि आवागमन के लिये कितने ही मार्गों को निर्माण केन्द्रीय अनुदान के खर्च से हो रहा है पर प्रान्त को बहुत कुछ खर्च उठाना पड़ रहा है ताकि इन मार्गों से प्रान्त के भीतरी भागों का सम्पर्क स्थापित हो सके। पर इस सम्बन्ध में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है। प्रान्त का चार सौ मील का सारा सीमावर्ती क्षेत्र मिला हुआ है। पाकिस्तान, चीन और बर्मा के प्रदेशों से और हमारा सारा क्षेत्र जो पाकिस्तानी सीमा के पास पड़ता है उसमें पहाड़ियां ही पहाड़ियां हैं। इन पहाड़ी इलाकों को आर्थिक स्थिति विभाजन से अस्त-व्यस्त हो गई है। सीमावर्ती प्रदेशों के और खास करके पहाड़ी प्रदेशों की गरीब वाशिन्दों को अब आसाम प्रान्त पर अपनी सारी चीजों की सप्लाई के लिये निर्भर करना पड़ता है जबकि पहिले ये लोग पास के सिलहट और मैमनसिंह से अपनी सभी चीजें पा जाते थे। इसलिये सड़कों के जरिये इन प्रदेशों से सम्पर्क स्थापित करना हमारे लिये जरूरी हो गया जिससे प्रान्तीय सरकार को यह काम हाथ में लेना पड़ा। युद्धोत्तर अनुदान में कुछ रकम इस काम के लिये प्रावहित की गयी थी किन्तु खेद है कि युद्धोत्तर बजट में कमी कर देने के कारण, दुर्भाग्य से हमें इन कामों में भी काट-छांट कर देनी पड़ा।

और फिर सीमा स्थापित हो जाने के कारण और कम्युनिस्टों द्वारा पैदा की हुई कठिनाईयों के कारण हमें प्रांतीय पुलिस बल की संख्या में इतनी वृद्धि करनी

पड़ी है कि खर्च आय के अनुपात से कहीं अधिक बढ़ गया है। पुलिस बल पर हमारा खर्च 120 प्रतिशत से भी अधिक बढ़ गया है। इन सीमावर्ती क्षेत्रों में भी, जिसकी देख-रेख पहले आसाम राइफल पलटन के जरिये केन्द्र किया करता था, अब हमें पुलिस बल रखना पड़ा है। इसका नतीजा यह हुआ है कि करीब पांच जिलों में हमें तुरन्त पुलिस बल रखना पड़ा जिसके लिये पहले हमें कुछ भी खर्च नहीं उठाना पड़ता था।

मैं खास तौर पर यहां उस बात पर जोर देना चाहता हूं श्रीमान्, जिससे आज प्रान्त को मुसीबत उठानी पड़ रही है और शायद आगे भी अभी उठानी पड़े। मेरा मतलब है कम्युनिस्टों की हरकतों से जो देश के इस हिस्से में आज हो रही हैं। सभा को मालूम है कि कम्युनिस्ट पार्टी इस बात का प्रयास कर रही है कि वह बर्मा और चीन के अपने स्वजातीय लोगों से सम्बन्ध स्थापित कर लें। इनकी हिंसात्मक कार्रवाइयों का दौर फिर शुरू हो चुका है। अगर आप समाचार पत्रों में आये समाचारों को पढ़ा जायें तो आपको पता चलेगा कि डिब्रूगढ़ में इन्होंने वही कौशल अपनाया था जो ये लोग कलकत्ता में अपनाये थे। यानी हिंसात्मक उपायों से—मसलन एसिड फेंक कर, बम फेंक कर, दस्ती बम फेंक कर, पिस्तौल चलाकर, सरकारी इमारतों पर ये कब्जा करने की कोशिश करते हैं। इनकी कई हरकतों को रोकने के लिए हम पुलिस बल से काम ले सकते हैं पर मेरा अपना दृष्टिकोण यह है—और आशा है सभी इस दृष्टिकोण से सहमत हैं—कि अगर हम यह चाहते हैं कि कम्युनिज्म रूपी रोग के जड़ को विनष्ट कर दिया जाये तो यह काम केवल पुलिस बल की मदद से नहीं पूरा किया जा सकता है। इसके लिए हमें ऐसे उपायों का अवलम्बन करना पड़ेगा जिससे जनता की हालत में सुधार हो और उसका जीवन स्तर ऊंचा हो। इसके लिए हमें जनता को स्वशासन की शिक्षा देनी पड़ेगी, जिसका उपदेश जनता को सम्भवतः कम्युनिस्ट लोग भी दे रहे हैं और यह सब तभी किये जो सकते हैं जबकि जनता पर खर्च करने के लिए उससे कहीं अधिक रकम प्रान्तीय सरकार के पास हो जो आज वह अपनी आय के बल पर खर्च कर सकती है।

मेरे कहने का मतलब यह है श्रीमान्, कि इन सब परिस्थितियों के कारण प्रान्त की आर्थिक स्थिति बड़ी गम्भीर हो गई है। देश विभाजन के पहिले इसकी आय थी साढ़े तीन करोड़ रुपये की। इसकी आय आज भी करीब यही है। भारत सरकार से जो अनुदान मिलता है उसको मिलाकर आज हमारी आय पांच करोड़ से कुछ ऊपर है। निश्चय ही इस आय से वहां का प्रबन्ध ठीक-ठीक नहीं चलाया जा सकता है। प्रान्तीय बजट में पहिले से ही 70 लाख की कमी है। जहां तक मैं समझता हूं कि आगामी अधिवेशन में 30 लाख की रकम प्रान्त को पूरक मांग के रूप में और मिल जायेगी। इसलिये प्रान्त की शासन व्यवस्था को अगर आपको स्वाभाविक स्तर पर भी चलाना है जैसा कि युद्ध पूर्व में था, तो उसके लिए कम से कम डेढ़ करोड़ की वृद्धि प्रान्तीय आगम में और होनी चाहिये। इस बीच में भारत सरकार के अर्थ विभाग ने कृपा करके अन्य प्रान्तों की तरह हमकों भी विकास अनुदान के रूप में कुछ रकम दी है। हिसाब लगाकर देखा गया है कि इस विकास अनुदान के कारण करीब ढाई करोड़ साल के आवर्तक व्यय का भार प्रान्त के राजस्व पर और पड़ जायेगा। दूसरे शब्दों में यह कहना चाहिये कि प्रान्त की तात्कालिक आवश्यकता के लिये हमें चार करोड़ की जरूरत है—डेढ़ करोड़ तो अभी मिलना चाहिये और बाकी ढाई करोड़ चार या पांच वर्षों के अन्दर।

[माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई]

इसलिये सवाल यह उठता है कि अपनी इस जरूरत के लिये रकम कहां से आ सकती है। संविधान के मसौदे में जो उपयोगी प्रावधान रखे गये हैं जिनमें अनुच्छेद 251 भी जिसे आपने अभी-अभी स्वीकार किया है, उनकी मैंने अच्छी तरह छानबीन की है। आयकर के वितरण के लिये जो आधार निर्धारित किया गया है उसके हिसाब से आसाम को आयकर का 3 प्रतिशत अंश मिलेगा जो डेढ़ करोड़ से ज्यादा न होगा। अवश्य ही हमें 30 लाख की आर्थिक सहायता केन्द्र से और मिलेगी। भविष्य में, वित्त आयोग क्या सिफारिश करेगा इसे मैं नहीं जानता। पटसन कर में से भी 40 लाख हमें दिया जायेगा। पर जब मैं यहां अपने प्रान्तीय बजट में कमी का जिक्र करता हूं तो प्राप्त होने वाली इन सब रकमों को शामिल करके ही कहता हूं कि बजट में कमी रहेगी। इसलिये प्रश्न यही आता है कि रकम हमें कैसे मिल सकती है? मैं यह जान लेने के लिए भी तैयार हूं कि वित्त आयोग प्रान्तों के प्रति बड़ा ही उदार भाव रखेगा और उनको और रकम देने के लिए कोई न कोई उपाय जरूर निकालेगा पर क्या उससे हमारी कम से कम जो आवश्यकता है उसकी भी पूर्ति हो सकेगी? यही कारण है जो मैं यह समझता हूं कि उत्पादन शुल्क का, खास करके प्रान्तों में पैदा होने वाली चीजों पर जो शुल्क हो उसका कुछ अंश प्रान्त को मिलना चाहिये और यही कारण था जिसके लिये मैंने दो संशोधन प्रस्तावित किये थे। संविधान में इस बारे में जो प्रस्तुत प्रावधान रखा गया है वह इस आशय का है कि अगर संसद विधि द्वारा ऐसा प्रावधान करे तभी उत्पादन शुल्क का कोई अंश प्रान्त को मिल सकता है। मैं यह चाहता था कि इस खण्ड के स्थान पर कोई ऐसा आदेश मूलक प्रावधान रखा जाता जिससे उत्पादन शुल्क का वितरण आवश्यक हो जाता और उसके लिये यह अपेक्षित न रह जाता कि संसद द्वारा इसके लिये एक विधि स्वीकृत होने पर ही वह वितरित किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि गत बारह साल से संविधान में इसी तरह का प्रावधान वर्तमान है पर किसी भी प्रान्त को इससे कोई लाभ नहीं पहुंचा है क्योंकि इस बीच में संसद ने इस सम्बन्ध में कोई विधि ही नहीं स्वीकृत की। इसलिये मैं चाहता यह हूं, ताकि इस प्रान्त का थोड़ा लाभ पहुंच सके, कि चाय, पेट्रोल और किरोसिन तेल पर जो उत्पादन शुल्क की आय हो—चाय आसाम में पैदा होती है और भारत की कुल उपज की दो तिहाई आसाम से ही मिलती है और पेट्रोल यहां केवल आसाम में ही निकलता है—वह इस प्रावधान के स्वीकृत होते ही तुरन्त प्रान्त को वितरित कर दी जाये।

उत्पादन शुल्क का 50 प्रतिशत, मैं यह चाहता हूं कि प्रान्त को दिया जाये। इस सम्बन्ध में मैं यह बताना चाहता हूं कि आसाम से निकलने वाले पेट्रोल और किरोसिन तेल से भारत सरकार को उत्पादन शुल्क के रूप में प्रायः दो करोड़ की आय होती है। मैं चाहता हूं कि आप इस पर भी तो विचार करें कि आसाम की खनिज सम्पत्ति प्रतिदिन कम होती जा रही है क्योंकि पेट्रोल बराबर ही निकाला जाता है और जब यह सम्पत्ति सर्वथा समाप्त हो जायेगी तो प्रान्त के राजस्व में बड़ी कमी हो जायेगी। कच्चे पेट्रोल पर और जमीन की लगान पर भी आय में बड़ी कमी हो जायेगी। इसलिये अगर उत्पादन शुल्क का एक समुचित अंश प्रान्त को दिया जाता है तो वह न केवल हमारे लिये सहायक ही होगा बल्कि इस

वितरण को भी लोग न्याय संगत ही कहेंगे। जहां तक चाय का सम्बंध है, भारत की कुल उपज का दो तिहाई अंश केवल आसाम से आता है। आसाम की सरकार ने चाय की खेती करने वालों को जमीन के लगान के सम्बन्ध में तथा और कई बातों के बारे में खास रियायतें दी थीं ताकि यह उद्योग यहां अच्छी तरह चालू हो जाये। इस क्षेत्र को अब चूंकि केन्द्र ने अपने हाथ में ले लिया है और इससे प्रान्त को बहुत बड़ा घाटा पहुंचा है, प्रान्त को क्षतिपूर्ति के रूप में कुछ न कुछ पाने का अधिकार है। इसलिये मेरा यह ख्याल है कि सभा के समक्ष इन सत्यों को उपस्थित करके मैं ठीक ही कर रहा हूं और प्रान्त को साहाय्य देने की जो मांग कर रहा हूं वह भी समुचित ही है। जब केन्द्र को इन चीजों पर उत्पादन शुल्क के रूप में आठ करोड़ की आमदनी होती है तो कोई वजह नहीं है कि इसकी 50 प्रतिशत अंश प्रान्त को क्यों न दिया जाये ताकि जिन कठिनाईयों में यह आज फंसा हुआ है उनसे वह मुक्ति पा सके। सम्भव है कि इस तर्क के विरुद्ध यह कहा जाये कि केन्द्र की आवश्यकतायें सर्वोपरि हैं। सुतरां इनको तुलना में प्रान्तीय आवश्यकता को प्राथमिकता नहीं दी जा सकती है। केन्द्र की आवश्यकता को मैं भी सर्वोपरि मानता हूं। मेरा प्रान्त एक सीमा प्रान्त है इसलिये मुझे तो इस बात का और किसी भी व्यक्ति से ज्यादा ख्याल है। पर आखिर आसाम तो भारत का ही एक अंग है और सीमा पर स्थित होने के कारण आज इस अंग का और भी अधिक महत्व है इसलिये अगर आप यह चाहते हैं कि यह प्रदेश एक प्रान्त के रूप में सुचारू रूप से अपने प्रकार्य सम्पादित करे तो जरूरी है कि यहां का शासन स्तर ऐसा हो और इस तरह से काम करे कि आप यहां के निवासियों को सन्तुष्ट रख सकें, इसकी थोड़ी समुन्नति कर सकें और उन बुरी ताकतों को जो आज समाज को ही बर्बाद करने पर तुली हुई हैं, उनको कुचलने में सक्षम हो सकें। इसलिय मैं असाधारण मांग नहीं कर रहा हूं। मैं फिर कहता हूं कि मैं कोई असाधारण मांग नहीं कर रहा हूं बल्कि मैं सिर्फ न्याय की मांग कर रहा हूं।

फिर श्रीमान्, आप उस खर्च पर भी विचार करें जो आप प्रान्त अपनी आमदनी के बल पर, अपनी जनसंख्या पर फी आदमी के हिसाब से उठा सकता है। इस सम्बन्ध में अगर मैं अपने प्रान्त की तुलना बम्बई से करता हूं तो मेरे अभिप्राय के सम्बन्ध में सदस्यों में कोई गलतफहमी न होनी चाहिये। मैं दूसरे सभी प्रान्तों की भलाई चाहता हूं। इस तुलना में हमें लाभ ही पहुंचेगा। गरीब आसाम अब तक अपनी सामाजिक सेवा के कार्यों पर फी व्यक्ति तीन रुपया खर्च कर पाता था और इसी में शासन का खर्च भी शामिल है। आज आसाम पांच रुपया फी आदमी खर्च कर पाता है पर बम्बई, मेरा ख्याल है, फी आदमी के हिसाब खर्च कर पाता है बाइस रुपये और इस बाइस में, मुझे पक्का मालूम है, खास सम्बन्धी जो रियायत कम खाद्य वाले प्रान्तों को भारत सरकार देती है वह शामिल नहीं है। इसको भी अगर शामिल करते हैं तो बम्बई, मुझे पक्का विश्वास है कि फी आदमी के हिसाब से तीस रुपये खर्च करता होगा। मैं किसी भी व्यक्ति पर कोई आरोप नहीं करना चाहता हूं। जब हमने यहां लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया था तो भारत के भविष्य के सम्बन्ध में हमने बड़ी ऊंची-ऊंची आशायें बांध रखी थीं। मूल-अधिकार सम्बन्धी अनुच्छेदों को स्वीकार करते समय हमने यह सोचा था कि अब भारत से दारिद्रय, कष्ट, रोग व्याधि तथा अज्ञान सदा के लिये दूर हो जायेंगे। मैं आपसे पूछता हूं कि कैसे आप इस उद्देश्य की प्राप्ति करने जा रहे

[माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई]

हैं? मैं यह नहीं कहता कि मेरे संशोधन परम पुनीत हैं और इनका पास होना जरूरी ही है। मेरा कुल कहना यह है कि जब तक कि आप इस दृष्टिकोण से नहीं देखते हैं तब तक भारत वह भारत नहीं बन सकता है जिसकी कल्पना लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव में की गई है। मैं आपको यह बताना चाहता हूं कि बम्बई कपड़े के निर्यात पर एक तरह का कर लगाता है जिसकी सारी रकम बम्बई को ही जाती है। इसके मुकाबिले में आसाम का ख्याल कीजिये जहां पांच रुपया फी व्यक्ति के हिसाब से सरकार खर्च कर पाती है। पेट्रोल और चाय ही इसके आय के साधन हैं और वह प्रतिदिन हर तरह से कम होते जा रहे हैं और प्रान्त अपने निवासियों के लिये जो सर्वथा गरीब हैं आवश्यक सामाजिक सेवाओं की भी व्यवस्था नहीं कर पाता है। यह तो वही बात हुई जो बाइबिल में कही गई है:–

"To him that hath, more shall be given, and
From him that hath not, even the little that he hath shall be taken away,"

अर्थात् जिसके पास है उसे तो और दिया जायेगा पर अकिंचन से, जो भी थोड़ा उसके पास है वह भी छीन लिया जायेगा।

मुझे विश्वास है कि सभा इस तरह की अवस्था न जारी रहने देगी और अगर वह मेरे संशोधन को नहीं स्वीकार करती है तो कम से कम आसाम और उड़ीसा जैसे गरीब प्रान्तों को पर्याप्त अनुदान देने के प्रश्न पर सहानुभूति पूर्वक विचार करेगी।

***श्री बी. दास:** आसाम के मुख्य मंत्री की हृदय विदारक वक्तृता से पता चलता है कि केन्द्रीय रकम किस तरह वितरित की जाती हे या उसे किस तरह वितरित करने का ख्याल किया जा रहा है। उत्पादन शुल्क के मद में जो केन्द्रीय आय होती है वह प्रान्तों की होनी चाहिये। सरकार कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में पृष्ठ 18 पर कहा है:–

"युद्ध के दिनों में बंगाल और आसाम को छोड़कर अन्य सभी प्रान्तों के बजट में बचत रही है।"

अभी आसाम के मुख्य मन्त्री ने हमें बतलाया है कि इस समय आसाम किस दु:खद स्थिति में है और यह कि पूर्व एवं पश्चिम दोनों ही दिशाओं से—बर्मा और पूर्वी बंगाल—कम्युनिस्टों के आ जाने के कारण प्रान्त की मुसीबत और भी बढ़ गई है। बर्मा और पूर्वी बंगाल दोनों ही विदेश हैं। इसलिये आसाम की आवश्यकताओं पर इस सर्वसत्ताधारी सभा को खूब सावधानी से विचार करना चाहिये। अगर भारत सरकार इस मामले में लापरवाह रहती है, अगर प्रान्तीय इकाइयों को साहाय्य देने का उसका विचार नहीं है या अगर वह राज्य के जो मूल कर्तव्य होते हैं उनका पालन वह नहीं करती है, अगर भारत सरकार का अर्थ विभाग अपनी टेक पर अड़ा रहता है और नौकरशाही करता है तो इस सभा को चाहिये कि वह भारत सरकार को इसके लिये बाध्य करे कि वह एक लोकतंत्रीय शासन के रूप में अपने प्रकार्यों को सम्पादित करे। अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ 9 पर पैरा 49 में सरकार कमेटी में केन्द्रीय उत्पादन शुल्क पर विचार किया है और इस निर्णय पर पहुंची है कि केन्द्र द्वारा संगृहीत उत्पादन शुल्क की आय का कम

से कम 50 प्रतिशत अंश प्रान्तों को मिलना चाहिये। माननीय मित्र श्री बारदोलोई ने कहा है कि पेट्रोल और किरोसिन तेल पर उत्पादन शुल्क की जो आय होती है उसका 75 प्रतिशत भाग आसाम को मिलना चाहिये। मेरा ख्याल है कि इसके लिये आपने जो कारण पेश किये हैं उनको देखते हुये उनकी 75 प्रतिशत की मांग सर्वथा उचित है।

मैं श्री बारदोलोई का कृतज्ञ हूं कि उन्होंने इस सम्बन्ध में उड़ीसा का जिक्र किया। तम्बाकू पर उत्पादन शुल्क के रूप में जो आय होती है उसका एक हिस्सा उड़ीसा प्रान्त को मिलना चाहिये। आज भारत सरकार इस सम्बन्ध में इस बात पर अड़ी हुई है कि उत्पादन शुल्क की आय का कोई अंश वह प्रान्तों को न देगी। यह सरकार कमेटी की सिफारिश को मानने पर तैयार नहीं हैं। इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में पृष्ठ 10 पर कहा है:–

> "तदनुसार हमारी यह सिफारिश है कि तम्बाकू पर उत्पादन शुल्क के रूप में जो कुल आय हो उसका 50 प्रतिशत अंश संघ राजस्व का भाग न हो बल्कि वह प्रान्तों में वितरित कर दिया जाये।"

भारत सरकार को श्रेष्ठता प्राप्त है श्रीमान्। वह ऐसा नहीं समझती है कि उस पर यह जिम्मेदारी आयात है कि इस सर्वसत्ताधारी सभा के समक्ष वित्त वितरण सम्बन्धी अपने आचरण पर वह प्रकाश डाले। अभी कुछ देर पहले डॉ. अम्बडेकर को हमने यह कहते सुना है कि एक विशेष प्राधिकारी या समिति इस बात के लिये नियुक्त की जाने वाली है जो इस बात की छानबीन करेगी कि आय-साधनों का पुनः प्रान्तों में किस तरह वितरण किया जाये। जवाब के सिलसिले में यह बात संयोगवशात् प्रकट हो गई। आखिर भारत सरकार की ओर से यहां बोलने वाले प्रतिनिधि ने क्यों नहीं यह महसूस किया कि यह उनका कर्त्तव्य है कि सभा को वह सारी बात बता दें? भारत सरकार के अर्थ विभाग के आचरण की मैं फिर इसलिये निन्दा करता हूं कि वह लोकतन्त्रीय सिद्धांतों का पालन नहीं कर रही है। उत्पादन शुल्क की आय प्रान्तों के नागरिकों की मेहनत और उनके पसीने के फलस्वरूप जमा हो पाती है। माननीय मित्र श्री बारदोलोई ने इस बात का यहां उल्लेख किया है कि आसाम में कम्युनिस्टों का खतरा पैदा हो गया है। मैं यह कहता हूं कि उत्पादन शुल्क की आमदनी कम्युनिस्टों के खतरे को दूर करने में खर्च की जानी चाहिये क्योंकि उत्पादन शुल्क के संग्रह से ही कम्युनिस्टों को प्रान्तों में प्रश्रय मिलता है। इस शुल्क का संग्रह सभी प्रान्तों में—यू.पी., मद्रास, उड़ीसा इत्यादि इत्यादि, में किया जाता है और इसके लिये बड़ी अलोकतन्त्रीय पद्धति बरती जाती है और कम्युनिस्टों ने इसी को अपने प्रचार का साधन बना लिया है। हम सभी जानते हैं कि उत्तरी मद्रास के नालगोण्डा और चित्तूर के जिलों में क्या हो रहा है। वहां कम्युनिस्ट किसानों में अपना जो आन्दोलन चला रहे हैं उसमें वह यह भी कहते हैं: "तम्बाकू पैदा करते हो तुम और भारत सरकार आकर तुमसे उस पर कर वसूल करती है"। भारत सरकार भी इतनी बुद्धि शून्य है कि वह इसी प्रणाली पर चिपटी हुई है। उत्पादन शुल्क का संग्रह वह प्रान्तीय प्राधिकारियों के द्वारा नहीं कराती है इसके लिये इसने अपने कर्मचारी रखे हैं जो ग्रामवासियों से तम्बाकू पर उत्पादन शुल्क वसूल करते हैं। इस महकमे के प्राधिकारी कौन हैं? ये सभी शहरों के रहने वाले हैं। मेरे अपने प्रान्त में तो इस महकमे के अधिकांश कर्मचारी कलकत्ता से आये हैं जो कलकत्ते की बोली बोलते हैं और वहां के देहातियों के विचारों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। उनके साथ भाई

[श्री बी. दास]

की तरह बात करना तो ये प्राधिकारी जानते ही नहीं हैं। तम्बाकू से भारत सरकार बहुत बड़ी रकम उत्पादन शुल्क के रूप में प्राप्त करती है और इसे पैदा करने वाले गरीब किसानों को ये प्राधिकारी तंग करते हैं करारोपण की उचित प्रणाली क्या है तथा करों की आमदनी का वितरण किस तरह किया जाये इस पर इस सभा को विचार करने का कभी मौका नहीं मिला श्रीमान्। अगर इस पर विचार करने का अवसर दिया गया होता तो हम भारत सरकार को यह राय देते कि ब्रिटिश हुकूमत से जो पद्धति इसने विरासत में अपनाई है उसे अब वह छोड़ दे। प्रान्तीय अधिकारी इन लोगों के सदा सम्पर्क में रहते हैं। ये उनको अच्छी तरह जानते हैं और उनकी आवश्यकताओं से अच्छी तरह परिचित होते हैं। ये लोग कर वसूली का काम मानवोचित सहानुभूति के साथ कर सकते हैं। इन प्रान्तीय अधिकारियों को ही तम्बाकू पर जो उत्पादन शुल्क हो उसे वसूल करने का काम सौंपिये। प्रसंगावशात् मैं यह भी कहूंगा कि भारत सरकार के अर्थ विभाग को अब अपना आचरण बदल देना होगा।

माननीय मित्र श्री बारदोलोई ने जो यह मांग की है कि आसाम की महती आवश्यकताओं को देखते हुये और उसके आय साधनों के अभाव का ख्याल करते हुये यह जरूरी है कि पेट्रोल और चाय के उत्पादन-शुल्क की आमदनी का 75 प्रतिशत या इससे कोई अधिक अंश आसाम को मिलना चाहिये मैं इसका सिद्धान्ततः समर्थन करता हूं। सरकार कमेटी की इस सिफारिश का भी मैं हार्दिक समर्थन करता हूं कि उत्पादन शुल्क के रूप में केन्द्र को जो आमदनी हो उसका 50 प्रतिशत अंश प्रान्तों को मिलना चाहिये।

मैं यह भी आशा करता हूं कि मेरा यह जो सुझाव है कि उत्पादन शुल्क का संग्रह प्रान्तीय प्राधिकारियों द्वारा ही होना चाहिये न कि केन्द्रीय प्राधिकारियों द्वारा जिनको उत्पादन करने वाले ग्रामीणों से कोई सहानुभूति नहीं रहती है, उसको शीघ्र कार्यान्वित किया जायेगा।

अब मैं अनुच्छेद 253(1) को लेता हूं जिसमें कहा गया है:—"नमक पर संघ कोई कर न लगायेगा"। यह एक भावुकतापूर्ण प्रावधान है। माननीय मित्र श्री थीरूमल राव यहां अन्य एक प्रसंग में कह चुके हैं कि नमक पर पुनः कर लग जाना चाहिये। नमक कर के उठ जाने से किसी को कोई फायदा नहीं पहुंचा है। इससे यही हुआ है, चोर बाजारी करने वालों ने और नमक तैयार करने वालों ने इसकी कीमत बढ़ा दी है। जब नमक कर था उस समय हम एक आना सेर के भाव से नमक खरीदते थे और आज हमें पांच या 6 आने सेर की कीमत देनी पड़ती है। इसलिये मेरा कहना है कि अनुच्छेद 253(1) का जो प्रावधान है वह सर्वथा भावुकतापूर्ण प्रावधान है। इस सम्बन्ध में मुझे और कुछ नहीं कहना है।

जहां तक कि प्रस्तुत अनुच्छेद के खण्ड (2) का सम्बन्ध है, हो सकता है मसौदे के रचयिता मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के, इस प्रावधान पर गर्व करते हों कि ऐसा सुन्दर प्रावधान उन्होंने संविधान में रखा है। पर इस संविधान का मूल्य ही क्या रह जाता है जबकि इसके प्रावधानों से जनता को कोई फायदा नहीं पहुंच पाता है। इसलिये, यद्यपि मैंने इस खण्ड पर अपना संशोधन पेश नहीं किया है, मैं यह कहूंगा कि इस संशोधन से मेरा अभिप्राय यही था कि भारत सरकार को इसके लिए बाध्य किया जाये कि संविधान की प्रारम्भण तिथि से छह महीने

के अन्दर संसद के समक्ष एक विधेयक उपस्थित करे जिसमें उत्पादन शुल्क के वितरण की व्यवस्था हो। इस खण्ड में यह कहा गया है कि उत्पादन शुल्क का वह अंश वितरित किया जायेगा जो संसद् विधि द्वारा निर्धारित करे। पर सवाल यह है कि संसद् को ऐसी विधि पास करने पर बाध्य कौन कर सकता है? संविधान के मसौदे की जो भाषा है उसके अनुसार भारत सरकार के अर्थ विभाग के लिए यह लाजिमी नहीं है कि वह ऐसा कोई विधेयक प्रस्तावित करे या आय के जिन साधनों पर उसका एकाधिकार हो गया है उसको वह छोड़ दे। शनैःशनैः हम सारे अधिकार केन्द्रीय सरकार को दे रहे हैं और जो भी थोड़ी बहुत आजादी या थोड़ा बहुत अधिकार प्रान्तों को प्राप्त है उसे भी धीरे-धीरे छीन ले रहे है। केन्द्रीय उत्पादन शुल्क के बारे में, जिसका संग्रह संघ करेगा, आखिर ऐसी साधु भाषा यहां क्यों रखी गई है कि "ऐसे शुल्क जो संघ सूची में वर्णित हैं"। संघ सूची में क्या-क्या मद रखे जायेंगे इसे हमने अभी तय नहीं किया है। भारत सरकार का अर्थ विभाग अगर चाहेगा तो मसौदा-समिति को यह आदेश दे देगा कि प्रान्तीय सूची में अमुक मद रखे जायें या उसमें अमुक मद न रखे जायें। यही कारण है कि जो इस खण्ड में यह कहा गया है:-"यदि संसद् विधि द्वारा यह प्रावहित करे तो.....विधि द्वारा निर्मित विभाजन सिद्धान्तों के अनुसार विभाजित की जायेगी।" मेरा ख्याल है कि यह बात हमारे सिद्धान्तों के खिलाफ जाती है। इस गौरवशालिनी सभा को भारत सरकार के प्रवक्ता से यहां यह पूछने का अधिकार है कि आखिर विभाजन सम्बन्धी वह सिद्धान्त क्या होंगे जो विधि द्वारा निर्मित किये जायेगें? ऊपरी सहानुभूति हमें यहा सर्वत्र दिखाई दे रही है। पर भारत सरकार का कोई भी प्रतिनिधि यहां सभा भवन में उपस्थित नहीं रहता है। मसौदा-समिति की ओर से जो भी बात कही जाती है वह यहां स्वीकार कर ली जाती है। इसी तरह से तो यहां की कार्रवाई चल रही है। इससे जनता को क्या फायदा पहुंचेगा? ऐसे संविधान को पास करनें से लाभ ही क्या है अगर उसको शीघ्र ही अमली रूप न दिया जा सका और भारत सरकार को इसके लिये बाध्य न किया जा सका कि वह आयकर के साधनों पर वह जो कब्जा जमाये है उसे अब छोड़ दे? यह एक ऐसी बात है जिस पर मैं यहां बहुत शोर मचा रहा हूं। मैं सादर आपसे आग्रह करता हूं, श्रीमान् कि आप खुद इसकी छानबीन करें कि वित्त वितरण के सम्बन्ध में ये जो प्रावधान यहां रखे गये हैं वह क्या समुचित हैं और उनके द्वारा क्या जनता के साथ न्याय हो पाता है? क्या ये प्रावधान ऐसे हैं कि संविधान के प्रवर्तन में आते ही उन आगमों को जिन्हें कि प्रान्तों से छीनकर ब्रिटिश शासन ने सन् 1924 से ही केन्द्रीय अधिकार में कर लिया था उनकी प्रान्तों में वितरित किया जाने लगेगा? अवश्य ही मैं यह आशा करता हूं कि यथा समय आप मसौदा समिति को यह आदेश जरूर देंगे कि जो बातें आपकी निगाह में यहां लाई गई हैं उन पर वह गौर करे।

***मि. तज़म्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैंने इस आशय का एक संशोधन भेजा था कि अनुच्छेद 253 का खण्ड (1) हटा दिया जाये। इस अनुच्छेद पर सभा में विचार शुरू किया गया था जो उस समय मैं मौजूद नहीं था। इसलिये किसी दूसरे सदस्य ने मेरा वह संशोधन पेश किया था। मैं नहीं समझता कि संविधान में इस आशय का प्रावधान रखना ठीक होगा कि संघ नमक पर कोई कर न लगायेगा। मेरे ख्याल से यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है और इसे संसद पर ही छोड़ देना चाहिये। इस सम्बन्ध में जैसा कि कानून वह बनाना

[श्री तजम्मुल हुसैन]

चाहे उसे इसकी स्वतन्त्रता प्राप्त रहनी चाहिये। कर लगाना या न लगाना संसद् का काम है और नमक पर कर लगाने का काम अब तक संसद् ही करती आई है। फिर संसद् को इस सम्बन्ध में विधि बनाने से आप क्यों रोकते हैं? आखिर संसद् में जनता के ही प्रतिनिधि रहेंगे और किसी समय यदि वह यह महसूस करे कि नमक पर कर लगाना चाहिये तो उसे इसकी स्वतन्त्रता प्राप्त रहनी चाहिये। यदि प्रस्तुत प्रावधान संविधान में रहता है तो संसद् और जनता दोनों का ही इस सम्बन्ध में हाथ बंध जायेगा। अगर जनता के प्रतिनिधि यह महसूस करें कि देश के हित में नमक कर लगाना जरूरी है तो उन्हें इसकी स्वतन्त्रता प्राप्त रहनी चाहिये। इस प्रश्न को हमें संसद पर ही छोड़ देना चाहिये। अब सवाल यह है श्रीमान्, कि अगर नमक पर कर नहीं लगाया जाता है तो उससे फायदा किसको पहुंचेगा? फायदा किसी को भी नहीं पहुंचेगा। अगर विदेश से बिना कर नमक का आयात होता है तो इसमें किसे नुकसान पहुंचेगा। अवश्य ही जनता को नुकसान पहुंचेगा। इसमें शक नहीं कि हमें महात्मा गांधी की इच्छाओं का आदर करना चाहिये। उनकी राय यह जरूर थी कि नमक पर कर न लगाना चाहिये पर अब समय बदल गया है। उन दिनों हम एक पराधीन राष्ट्र थे और हमारे बहुत से कार्य इसलिये होते थे कि यहां से अंग्रेजों को निकाला जा सके। पर अब यहां अंग्रेज नहीं रह गये हैं। अब हम पूर्णतः स्वतन्त्र हैं और अब हमारा यह कर्तव्य है कि देश को बिना नुकसान पहुंचाये जिस तरह हो इसकी आय में वृद्धि करें। आशा करता हूं माननीय कानून सचिव इस स्थिति पर विचार करेंगे और प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करेंगे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं अपनी बातें अनुच्छेद 253 के खण्ड (1) को हटाने तक ही सीमित रखूंगा, जिसमें यह कहा गया है कि संघ नमक पर कोई कर न लगायेगा। श्री महावीर त्यागी का यह संशोधन है कि इस खण्ड को हटा दिया जाये और मैं उनके इस संशोधन का समर्थन करना चाहता हूं। सभा को मैं यह बता दूं—और संशोधन—सूची से उन्हें स्वतः यह बात मालूम हो गई होगी—कि माननीय मित्र सरदार हुकुमसिंह, मि. तजम्मुल हुसैन, मैंने तथा अन्य कई सदस्यों ने इसी संशोधन की सूचना यहां अरसा पहिले भेजी थी। हम लोगों ने अपने संशोधनों को इसीलिये यहां पेश नहीं किया कि माननीय श्री महावीर त्यागी को, जिन्होंने गत असहयोग आन्दोलन में, विशेषकर के नमक आन्दोलन के सम्बन्ध में बहुत बड़ा हिस्सा लिया था और कष्ट उठाये थे, इसे उपस्थित करने का गौरव प्राप्त हो सके।

इस संशोधन पर मैं केवल आंकड़ों के आधार पर ही विचार करूंगा। विभाजन पूर्व के आंकड़ों के देखने से पता चलता है कि नमक कर से केन्द्रीय सरकार को 9 करोड़ की वार्षिक आमदनी होती थी। विभाजन पूर्व की आबादी के हिसाब से फी आदमी तीन आना साल यानी 1 पैसा महीना नमक कर बैठता था। दैनिक हिसाब यह बैठेगा कि फी आदमी 1/10 पाई रोज देता था। फी आदमी को नमक कर में जो रकम देनी पड़ती है वह इतनी नगण्य है कि उसकी अगर छूट भी मिल जाती है तो उससे गरीब जनता को बचत नहीं महसूस हो पाती है। गरीब जनता की भलाई के ख्याल से ही नमक कर उठाया गया था पर इससे उसको कोई फायदा नहीं पहुंचा। नमक कर की छूट से सारा फायदा उठाया है नमक व्यापारियों ने वस्तुतः नमक कर की छूट कई बड़े-बड़े नमक व्यापारियों के लिये

वरदान ही सिद्ध हुई और जिस साधु उद्देश्य से नमक कर उठाया गया था वह सर्वथा असफल रहा। वस्तुतः जिस साधु उद्देश्य से हमने नमक कर उठाया था उसकी पूर्ति के लिए उपाय ही क्या है? इसलिये मेरा सुझाव यह है कि नमक कर को उठाने के लिए संविधान में कोई प्रावधान लिपिबद्ध न किया जाये। इसे हमें विधान-मण्डल पर छोड़ देना चाहिये और गरीबों के लाभ के लिये जो भी उसे ठीक जंचे वैसा कानून इस सम्बन्ध में वह बनाये। इस सम्बन्ध में मैं यह सुझाव दूंगा कि नमक कर लगाना चाहिये पर उसकी जो आय हो वह गरीबों के फायदे के लिए संरक्षित रखी जानी चाहिये जिनके लिए गांधी जी को सतत चिन्ता रहती थी। प्रस्तुत खण्ड (1) को संविधान में स्थान देने में कोई लाभ नहीं है। महात्मा गांधी के पवित्र सिद्धान्तों का हमने संविधान में कई स्थलों पर उल्लंघन किया है। इसलिये इस खण्ड को हटाने का विरोध हम इस आधार पर नहीं कर सकते हैं, कि गांधी जी नमक कर नहीं चाहते थे। गांधी जी के सिद्धान्तों में तो एक यह सिद्धान्त भी था विकेन्द्रीकरण की नीति अपनाई जानी चाहिये और केन्द्र से अधिकार लेकर उसे प्रान्तों और राज्यों को सौंप देना चाहिये। यहां हम यह देखते हैं कि जब तक गांधीजी जीवित थे तब तक तो लोग उनके इस विचार से साहनुभूति रखते थे पर उनकी मृत्यु के बाद तो विकेन्द्रीकरण के विचार का लोगों ने सर्वथा परित्याग कर दिया है और केन्द्र में अधिकाधिक शक्ति सन्निहित रखना ही हमारा आज उद्देश्य हो गया है। मेरा ख्याल है श्री महावीर त्यागी के संशोधन को सभा को स्वीकार करना चाहिये।

***श्री राजबहादुरः** (मत्स्य राज्य संघ): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि माननीय मित्र श्री महाबीर त्यागी ने जो संशोधन रखा है उससे मैं सहमत नहीं हो सकता हूं। संशोधन के समर्थन में अपने तीन या चार बातें ही कही हैं। उनका कहना है कि इस बारे में हमें अपनी आने वाली पीढ़ियों का हाथ न बांध देना चाहिये। उन्होंने यह भी कहा है कि नमक की एक बहुत बड़ी राशि, सैकड़ों हजार टन हर साल मिश्र, पाकिस्तान और अन्य देशों से मंगाया जाता है। आखिरी बात आपने यह कही है कि नमक कर के उठा देने से भारत के राजस्व में 9 करोड़ की कमी हुई है। उनकी मुख्य दलीलें यही रही है जो मैंने अभी कही है।

मेरा ख्याल है श्रीमान्, कि अगर उनके तर्कों पर गौर से विचार किया जाये तो पता चलेगा कि ये सही नहीं है। यह कहावत ठीक ही है कि आदमियों की याददाश्त कमजोर होती है। अपने माननीय मित्र को मैं इस बात की याद दिलाऊंगा कि राष्ट्रपिता के नेतृत्व में नमक सत्याग्रह का जो महत्वपूर्ण आन्दोलन चला था वह हमारे जातीय इतिहास में स्वर्णभरों में लिखा जाना चाहिये और अपने इतिहास के इस महिमामण्डित अध्याय को कभी भूलाया नहीं जा सकता है और न उसकी उपेक्षा की जा सकती है। केवल इस आधार पर कि नमक कर उठाने का प्रावधान संविधान में रखने से हमारी आगामी पीढ़ियों का हाथ बंध जायेगा, नमक आन्दोलन सम्बन्धी अपने इतिहास की हम उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। बल्कि होना तो यह चाहिये कि अपने इस वीरतापूर्ण संग्राम की स्मृति को सदा बनाये रखने के लिए हमें संविधान में ही प्रस्तुत प्रावधान रखना चाहिये ताकि हमारी सन्ततियों को उससे सदा प्रेरणा प्राप्त होती रहे। यह कथन कि नमक कर के उठा देने से भारतीय राजस्व में कमी हो गई है कोई स्थायी वजन नहीं रखता है। कई मित्रों ने यह आपत्ति भी की है कि नमक कर का उठ आना चोर बाजारी करने वालों के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। मैं कहता हूं कि चोर बाजारी आज केवल नमक के

[श्री राजबहादुर]

व्यापार में ही नहीं चल रही है। सभी रोजगारों में आज चोर बाजारी चल रही है। इसका इलाज यह नहीं है कि आप सिद्धान्तों को ही अस्वीकार करें और स्वातंत्र्य संग्राम के दिनों में हमने जो वीरता पूर्ण युद्ध किये हैं उनको न स्वीकार करें। इलाज यह है कि आप चोर बाजारी को समाप्त कर दीजिये। न केवल नमक-व्यवसाय में बल्कि किसी भी व्यवसाय में, ऐसा कीजिये, कि चोर बाजारी रह ही न जाये। यह स्पष्ट है कि खाद्य पदार्थ और कपड़े के बाद, हमारी आवश्यकताओं में नमक का ही स्थान आता है। इसलिये नमक कर के लगाये जाने या उठाने का प्रभाव तमाम जनता पर पड़ेगा। मैं इस खण्ड को रखने के पक्ष में हूं और न केवल भावुकता के आधार पर नहीं पर मैं यह जरूर कहूंगा कि भावुकता सम्बन्धी कारण कम महत्व नहीं रखते हैं। राष्ट्रीय भावना या भावुकता के लिए हर सदस्य को सदा अभिलाषी रहना चाहिये। राष्ट्रीय भावनाओं के लिए तो हमें अपना जीवन बलिदान कर देना चाहिये। इसलिये, राष्ट्रपिता के नेतृत्व में जो महत्वपूर्ण नमक सत्याग्रह का आन्दोलन चलाया गया था उसकी स्मृति में, इस प्रावधान को संविधान में हमें एक समादृत स्थान देना ही चाहिये। दाण्डी अभियान की प्रसिद्ध घटना को हम भला कैसे भुला सकते हैं? अगर और किसी उद्देश्य से नहीं तो कम से कम इसी उद्देश्य से हमें यह प्रावधान यहां रखना चाहिये कि इसके जरिये हम राष्ट्र के प्रति, देश के प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित कर सकें, राष्ट्रपिता की स्मृति के प्रति, उस गौरवपूर्ण संग्राम की स्मृति के प्रति अपनी श्रद्धा प्रदर्शित कर सकें। हमें संविधान में ऐसी कोई चीज जरूर रखनी चाहिये जो हमारे गौरवशाली संग्राम की उच्च भावना पर प्रकाश डालती हो, विदेशी प्रभुता के विरुद्ध हमने जो महान् संग्राम चलाया था उसकी हमें सतत् स्वाभिमानपूर्वक याद दिलाती रहे। जैसाकि मैंने अभी कहा है इसमें केवल राष्ट्रपति भावना का ही प्रश्न नहीं निहित है। राष्ट्र की अर्थ नीति के आधार पर भी मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं। जैसाकि मैंने कहा है, अगर नमक कर का उठ जाना चोर बाजारी करने वालों के लिये वरदान सिद्ध हुआ है तो होना यह चाहिये कि चोर बाजारी की समस्या का समाधान निकाला जाये और यह कार्य यहां नहीं, अन्यत्र किया जा सकता है। पर इस नमक कर के प्रश्न के सिलसिले में अनिवार्य रूप से एक दूसरा प्रश्न जो हमारे सामने आ जाता है वह यह है कि ब्रिटिश शासकों ने हमारे नमक उद्योग को किस तरह दबाया और किस तरह फिर इस उद्योग को हम पुनर्जीवित कर सकते हैं। मैं एक ऐसी रियासत से आया हूं जिसे नमक उद्योग के कुचले जाने के कारण बहुत बड़ा नुकसान उठाना पड़ा है। इसलिये, इस सम्बन्ध में मेरी कुछ विशेष अनुभूतियां हैं। मेरे अपने प्रदेश राजस्थान में, और अपनी रियासत भरतपुर में, एक खूब समुन्नत गृह उद्योग के द्वारा लाखों मन नमक हर साल तैयार किया जाता था। किन्तु सन् 1979 ई. में अंग्रेजों ने अपने स्वार्थों के लिए इस उद्योग को कुचल दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्य की आबादी कम हो गई, बहुत से लोग दूसरे स्थानों को चले गये। हजारों आदमी बेकार हो गये। क्या इस उद्योग को हमें पुनर्जीवित नहीं करना है? नमक कर के उठा देने से भारतीय संघ के राजस्व में करोड़ों की कमी जरूर हो जायेगी पर अगर हम इस उद्योग को पुनर्जीवित करते हैं तो इससे हजारों आदमियों को रोजी का सिलसिला हो जायेगा। और साथ ही यह भी होगा कि नमक के मामले में हम स्वावलम्बी हो जायेंगे। यह एक लज्जा की ही बात है कि आज स्वाधीन होने पर भी हमें लाखों टन नमक विदेशों से मंगाना

पड़ता है। अगर हम ऐसी कोई कार्रवाई करते हैं जिससे हमारा नमक उद्योग पुनर्जीवित हो जाता है और खूब चलने लगता है तो हमारा नमक का आयात बिल्कुल रुक जायेगा। इस बीच में हम इस आयात पर और अधिक कर बैठा सकते हैं। हम ऐसे उपायों को खोज कर सकते हैं जिनसे हमारा नमक उद्योग पुनः प्रतिष्ठित हो सके। वैसा होने पर नमक कर के रूप में जो हमारा घाटा हुआ है वह अन्य कई तरह से पूरा हो जायेगा।

इस खण्ड को हटाने के विरुद्ध तीसरी बात यह की जा सकती है कि उसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव अच्छा नहीं पड़ेगा। यह तीसरी बात भी उतना ही महत्व रखती है जितना कि पहिले कही दो बातें। अगर इस खण्ड को हटा दिया जाता है तो इसका जनता पर क्या प्रभाव पड़ेगा? सही या गलत जनता हममें से कइयों पर अभी भी यह दोषारोपण करती है कि मौखिक रूप से तो हम गला फाड़ कर उन सिद्धान्तों की प्रशंसा करते हैं जिन पर महात्मा गांधी सदा अटल रहे, जिनकी उन्होंने देश को सीख दी, न केवल सीख दी बल्कि उन पर अमल किया–पर क्रियात्मक रूप से हमने उन्हें सर्वथा अस्वीकार कर दिया है। अगर हम इस खण्ड को अनुच्छेद से निकाल देते हैं तो हम पर यह दोषारोप किया जायेगा कि अभी महात्मा जी को गुजरे दो ही साल हुये हैं पर हम उनके महान् सुकृत्यों को अब याद भी रखना नहीं चाहते हैं। हम पर यह दोषारोप किया जायेगा कि हमने संविधान में एक ऐसे खण्ड को रखना अस्वीकार कर दिया जो उस आदर्श को अमर बना देता जिसके लिये राष्ट्रपिता ने महान् त्याग किये और जिसके आधार पर उन्होंने देश के असंख्य नर नारियों में चेतना की लहर दौड़ा दी। इसलिये मैं यह कहूंगा कि अगर हम इस खण्ड को हटा देते हैं तो इसका जनता पर बड़ा ही बुरा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा और देश में हमारी सर्वत्र निन्दा की जायेगी। इसलिये राष्ट्रीय इतिहास के इस मौके पर उचित यह होगा कि हम इस बात का हमेशा ख्याल रखें कि हमसे कोई भी ऐसा काम न हो जिसके कारण जनता में हमारे विरुद्ध दुर्भाव उत्पन्न हो। नमक एक ऐसी चीज है जिसकी हर आदमी को रोज जरूरत होती है और खास करके हमारे किसान भाइयों को तो अपने पशुओं के लिए भी नमक की जरूरत होती है। यह सच हो सकता है कि फी आदमी को जो रकम नमक कर के रूप में देनी पड़ेगी वह बहुत ही नगण्य होगी पर नमक कर का जनता पर जो प्रभाव पड़ेगा वह बड़ा अवांछनीय होगा। इसलिये यह आवश्यक है कि इस खण्ड को रहने दिया जाये।

इस खण्ड को रखने की राय देते हुये मैं यह जरूर कहूंगा कि इसमें थोड़ा संशोधन करने की जरूरत है। यहां केवल 'नमक' शब्द का प्रयोग हम नहीं कर सकते हैं क्योंकि नमक में तो कैलसियम क्लोराइड से लेकर प्लैटिनम क्लोराइड तक हजारों चीजें आ सकती हैं। इसलिये अच्छा यह होगा कि हम यहां 'साधारण नमक' शब्दों को रखें। इसी तरह यह भी अच्छा होगा कि 'Salt' (नमक) शब्द के आगे 'Produced in India' (भारत में पैदा किये गये) शब्दों को जोड़ दें। अगर इन संशोधनों को शामिल कर दिया जाता है, तो मेरे ख्याल में इस खण्ड में कोई त्रुटि न रह जायेगी। इन शब्दों के साथ, मेरा यह निवेदन है श्रीमान्, कि इस खण्ड को संविधान में अवश्य रखा जाये।

***माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स रायः** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम में जो संशोधन है उसे यद्यपि मैंने उपस्थित नहीं किया है पर मैं यह जरूर महसूस

[माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय]

करता हूं कि उत्पादन शुल्क की आय के सम्बन्ध में राज्यों और केन्द्र के बीच कुछ ऐसा प्रबन्ध जरूर होना चाहिये जिससे राज्यों को अपना शासन प्रबन्ध सुचारू रूप से चलाने के लिये पर्याप्त रकम मिल सके। मैं यह जानता हूं कि एक विचारधारा यहां यह भी है कि उत्पादन शुल्क की आय सर्वथा केन्द्र की चीज है और वह ऐसी आय नहीं है जिसकी पाने का दावा राज्य अधिकार के नाते कर सकते हों। पर हमें इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि जो राज्य उन पदार्थों को पैदा करते हैं जिन पर उत्पादन शुल्क वसूल किया जाता है, वह यह महसूस करते हैं कि उत्पादन शुल्क पर उनका भी इसलिये हक है कि ये पदार्थ उनके इलाकों में उत्पन्न किये जाते हैं। उदाहरण के लिए मैं आप को बताऊं कि पेट्रोल आसाम से निकलता है, जैसा कि अभी आसाम के माननीय मुख्य मन्त्री ने कहा है, और केन्द्र पेट्रोल तथा किरोसिन तेल पर उत्पादन शुल्क के रूप में करीब दो करोड़ रुपये वसूल करता है जो केन्द्रीय राजस्व में जाता है। इसके अलावा, सभा को भी यह मालूम है और सारा देश जानता है कि भारत में चाय की कुल उपज का दो तिहाई भाग आसाम में ही पैदा होता है जिस पर केन्द्रीय सरकार को उत्पादन शुल्क और आयात कर के मद करीब 6 करोड़ की आमदनी होती है। अस्तु, इस विषय पर मुझे आगे चलकर बोलने का मौका मिलेगा। पर इस आमदनी में से आसाम को कुछ भी नहीं मिलता है। अवश्य ही हम यह महसूस करते हैं कि इसमें से कुछ हिस्सा हमें भी पाने का हक है। कम से कम इस आय का कुछ प्रतिशत—और हमारा दावा तो यह है कि 50 प्रतिशत अंश—आसाम को अवश्य मिलना चाहिये। आसाम में लोगों का इस समय यही ख्याल है और एक अरसा से, जब से पेट्रोल वहां निकलने लगा तभी से लोगों का यही ख्याल है। अब देश स्वतन्त्र हो गया है और अपनी हुकूमत स्थापित हो गई है। हम यह अनुभव करते हैं कि अपने केन्द्रीय शासन के विचारों के विरुद्ध लड़ना सर्वथा बेकार है क्योंकि उसे सभी प्रान्तों के प्रति सहानुभूति है और पिछड़े हुये सीमावर्ती प्रान्त आसाम के लिए तो उसे खास तौर पर सहानुभूति है। हम यह उम्मीद करते हैं कि कुछ न कुछ नया प्रबन्ध जरूर किया जायेगा और राज्यों को सहायता जरूर दी जायेगी ताकि वह अपना शासन प्रबन्ध ठीक तरह से चला सके।

इस प्रश्न को लेकर हम क्यों इतना बेचैन हैं इसका कारण यह है। जैसा कि आसाम के माननीय मुख्य मंत्री ने बताया है, हमारे प्रान्त की शासन की आर्थिक अवस्था बड़ी खराब है। हमारी आमदनी साढ़े तीन करोड़ की है। केन्द्रीय सरकार से आय कर के मद में हमें एक करोड़ बीस लाख रुपये सालाना और मिल जाते हैं। पटसन-शुल्क की आय से करीब 40 लाख और हमें केन्द्रीय सरकार देती है और करीब 30 लाख सहायता के रूप में मिल जाते हैं। इन सबके बावजूद भी हमें कमी पड़ती है और करीब एक करोड़ की कमी पड़ती है। और फिर जो संस्थायें हमने अभी-अभी स्थापित की हैं उनके संधारण में प्रान्तीय सरकार का खर्च बढ़ जायेगा और इससे उसके बजट में और भी कमी आ जायेगी। हमने हिसाब लगाकर देखा है कि कभी ढाई करोड़ की रहेगी और हो सकता है यह राशि तीन करोड़ तक भी पहुंच जाये। यह है स्थिति हमारे आसाम प्रान्त की जो सीमावर्ती प्रान्त है और जो अच्छी तरह समुन्नत नहीं हो पाया है जैसा कि हमारे मुख्य मंत्री महोदय ने बताया है, हमें चार करोड़ की तत्काल आवश्यकता है ताकि बजट को बराबर कर सकें और उन संस्थाओं को चला सकें जिनको हमने

अभी-अभी संस्थापित किया है। हम आशा करते हैं कि वित्त आयोग शीघ्र ही संगठित कर दिया जायेगा और राष्ट्रपति, कम से कम चार करोड़ की तत्कालिक सहायता प्रदान करेंगे। अगर चार करोड़ हमें मिलते है तो हमें उतनी रकम मिल जाती है जितने कि हम मांग करते हैं यानी उत्पादन एवं आयात शुल्क की आय का 50 प्रतिशत अंश हमें मिल जाता है। इसलिये हमारा यह विश्वास है कि शीघ्र ही वित्त-आयोग का गठित किया जाना परमावश्यक है और यह आयोग, हमें विश्वास है कि आसाम, उड़ीसा तथा अन्य उन प्रान्तों को जिनके बजट में कमी है, अवश्य सहायता देगा।

एक बात मैं और कहना चाहता हूं श्रीमान्, और वह है अनुच्छेद 253 के खण्ड (1) के बारे में। मेरा खुद अपना हमेशा यही ख्याल रहा है कि पूर्ववर्ती शासन के विरुद्ध जो हमने संग्राम चलाया था उसे नमक आन्दोलन से बड़ा ही बल मिला था और जनता को तत्कालीन शासन का प्रबल विरोधी बनाने में इस आन्दोलन में बड़ी सहायता पहुंचाई थी। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसी कारण से नमक कर उठाया गया है और यही कारण है कि नमक कर के खिलाफ भारतीय जनता की इतनी प्रबल भावना है। पर इस खण्ड को संविधान में रखकर आगामी पीढ़ियों का हाथ क्यों बांध दिया जाये, यह मेरी समझ में नहीं आता है। यहां 'Duties' शब्द के होने से इसमें आयात कर भी शामिल रहेगा। संसद अगर चाहे कि नमक पर कर न लगाया जाये तो वह खुद ऐसा कानून बना सकती है। पर यदि हम संविधान में इस खण्ड को स्थान दे देते हैं तो फिर हमेशा के लिये यह प्रावधान रह जायेगा। इसलिये मेरा कहना यह है कि इस सम्बन्ध में संसद की विधि निर्माण की शक्ति बनी रहने दीजिये और उसका हाथ न बांधिये। राजस्थान जैसे प्रदेश को, जैसा कि माननीय मित्र श्री राज बहादुर ने यहां जिक्र किया है, संसद् आसानी से, इस उद्योग को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए मदद दे सकती है और वहां के निवासियों को प्रोत्साहन दे सकती है। मैं चाहता हूं कि संसद् ऐसी कोई कार्रवाई जरूर करें ताकि यह उद्योग वहां पुनः प्रतिष्ठित हो सके। इसलिये मैं यह समझता हूं कि संविधान में इस खण्ड को रखना बुद्धिमता की बात न होगी। महात्मा गांधी के प्रति हम लोगों को महती श्रद्धा, महान आदर है और सम्भवतः यही कारण है जो इस खण्ड के लिए लोगों में इतनी भावना है। पर अब स्थिति बदल गई है, विदेशी शासक यहां से चले गये हैं और शासन की बागडोर हमने सम्भाल ली है। अब हममें यह भावना होनी चाहिये कि गरीबों को मदद दें, यथाशक्ति धन संग्रह करें ताकि उससे गरीब जनता का जीवन स्तर ऊंचा कर सकें। हमें सरकार के हाथों को, संसद् के हाथों को बांध न देना चाहिये कि जरूरत होने पर भी वह नमक पर कर न लगा सकें। मुझे विश्वास है कि संसद् के सदस्य, इसका समुचित निर्णय कर लेंगे कि परिस्थिति के अनुसार कर लगाया जाये या न लगाया जाये। इसलिये श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि अनुच्छेद 253 के खण्ड (1) को बिलकुल हटा ही देना चाहिये।

अन्त में सभा से मैं यह भी अनुरोध करूंगा कि वह कमी वाले राज्यों की स्थिति का ख्याल करे और यथा सम्भव उनको साहाय्य दे और सरकार के हाथों को भी मजबूत बनाने में मदद दे ताकि वह आसाम, उड़ीसा जैसे राज्यों को, जिनको कि बजट में कमी है, मदद दे सके। इन शब्दों के साथ अब मैं अपना स्थान ग्रहण करता हूं।

***सरदार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाब : सिख): अध्यक्ष महोदय, माननीय मित्र त्यागी द्वारा उपस्थित किये संशोधन का समर्थन करने के लिए मैं खड़ा हो रहा हूं। यह संशोधन रखने के लिये मैं उनको बधाई देता हूं क्योंकि मैं यह महसूस करता हूं कि उनके जैसे प्रबल कांग्रेस भक्त महात्मा गांधी के अनुयायी को परिस्थिति के सम्बन्ध में, व्यावहारिक एवं यथार्थ दृष्टिकोण ही अपनाना चाहिये। माननीय मित्र श्री राज बहादुर की वक्तृता सुन लेने के बाद भी, इस खण्ड की उपयोगिता मेरी समझ में नहीं आई ओर सिवाय भावुकता के, मुझे इस खण्ड को रखने का और कोई कारण नहीं दिखाई देता है। मैंने खुद इस संशोधन की सूचना भेज रखी थी और आपकी अनुमति हो तो मैं कहूंगा कि प्रस्तुत संशोधन उसकी पुनरावृत्ति मात्र है। अब चूंकि यह पेश हो चुका है मैं इसका हार्दिक समर्थन करता हूं।

जैसाकि मैं कह रहा था, सिवाय इसके कि भावुकता के आधार पर इसका समर्थन किया जाये, मैं और कोई वास्तविक कारण नहीं देखता जिसके आधार पर इसका कोई भी समर्थन कर सकता हो। यहां यह कहा गया है कि अगर इस खण्ड को हम संविधान में रखते हैं तो पूज्य महात्मा गांधी के लिये यह एक समुचित स्मारक का काम देगा। इस सम्बन्ध में मेरा यह कहना है कि संविधान में अन्य कई स्थलों पर और अन्य कई बातों के सम्बन्ध में अपने दिवंगत महान नेता की कई इच्छाओं की आपने सर्वथा अवहेलना की है। अगर वस्तुतः हमारी अच्छा यही है कि महात्मा जी के स्मारक स्वरूप संविधान में कुछ अवश्य रखा जाये तो मैं कहूंगा कि इसके लिए हमें पर्याप्त अन्य कई मौके हैं। माननीय मित्रों को मैं यह याद दिला दूं कि अनुच्छेद 1 पर कई संशोधनों की सूचनायें दी गई हैं और कई मित्र यह प्रस्ताव करना चाहते हैं कि खुद संविधान में अपने इस महान नेता का नाम रखा जाये। इस बात से मैं सहमत हूं कि उस अनुच्छेद में उनके महान नाम का उल्लेख आना ही वस्तुतः हमारे लिये एक समुचित स्मारक होगा।

जहां तक मैं समझ पाता हूं, संविधान में ऐसा कोई प्रावधान रखना जिससे भावी संसदों पर यह प्रतिबन्ध लग जाता हो कि वह किसी वस्तु विशेष पर कर लगा ही नहीं सकती हैं, बड़ा अशोभनीय सा प्रतीत होता है। भावी संसदों पर संविधान द्वारा इस तरह का प्रतिबन्ध लगाना किसी तरह भी औचित्यपूर्ण नहीं माना जा सकता है। एक मित्र ने यह कहा है कि इस खण्ड के न रखने से जनता पर एक बड़ा अवांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा। मैं नहीं समझ सकता कि क्या अवांछनीय प्रभाव पड़ेगा। इस समय नमक पर कोई कर नहीं लगाया जाता है, पर इसका जनता पर क्या मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा है। बल्कि इससे यही हुआ है कि हमारे राजस्व में बहुत बड़ी कमी आ गई है। वर्तमान परिस्थिति में जब राज्य की आय इतनी कम हो गई है और हम एक जटिल स्थिति में पड़ गये हैं, राजस्व में इस तरह जबरदस्त कमी आने देना किसी तरह भी उचित नहीं है। घाटे के प्रश्न को जाने दीजिये। इस कर को हमने उठाया था गरीबों को साहाय्य पहुंचाने के अभिप्राय से पर इससे गरीबों को ही क्या साहाय्य मिल पाता है? माननीय मित्र श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने प्रश्न के इस पहलू पर विचार किया है और बताया है कि नमक कर के मद में 9 करोड़ की आय होती थी और इस 9 करोड़ को अगर अपनी विभाजन पूर्व आबादी पर बांटते हैं तो—यद्यपि मैं यह नहीं समझता हूं कि उन्होंने ठीक-ठीक हिसाब लगाया है—फी आदमी चार आना प्रति माह यह कर बैठता है जिसका अर्थ उनके हिसाब से यह हुआ कि फी आदमी को लगभग

दो पाई प्रतिदिन देना पड़ता है। नमक कर के उठ जाने से जनता को जो दो पाई प्रतिदिन की बचत हुई है इसका कोई मनोवैज्ञानिक प्रभाव उस पर पड़ा हो ऐसा नहीं दिखाई देता है। हां इसका यह असर जरूर हुआ है देश के राजस्व में एक जबरदस्त कमी आ गई है। और फिर नमक की कीमत भी बहुत ऊंची चढ़ गई है इस तरह कुल मिलाकर इसका उससे सर्वथा विपरीत ही प्रभाव पड़ा है जो कि हम चाहते थे। फिर एक तीसरी बात भी है जिस पर मैं जोर देना चाहता हूं। आज शरणार्थियों की समस्या अपनी सरकार के लिए जबरदस्त चिन्ता का, सर दर्द का कारण बन गई है और अब तक इसका कोई हल नहीं निकल पाया है। इससे पहिले जो बैठक बुलाई गई थी जिसमें सरकारी और गैर-सरकारी सभी प्रतिनिधि समवेत हुए थे, उसमें इस प्रश्न पर विचार किया गया था कि शरणार्थियों को फिलहाल बान्ड या ऋणपत्र दे दिये जायें और किश्तों में उनको उसकी रकम धीरे-धीरें दे दी जाये या इतना ही किया जाये कि उस पर उनको सूद दे दिया जाया करे जिससे शायद उनका काम चल जाये। इस समस्या का समाधान अब इस नमक कर में मिल जाता है। अगर हम नमक कर लगा देते हैं और इसकी आय शरणार्थियों के पुनर्निवास के प्रयोजन के लिए जमा कर देते हैं तो शरणार्थी भाइयों को ऋणपत्र देने की जरूरत न रह जायेगी और राज्य पर भी कोई अतिरिक्त भार न पड़ेगा। इसलिये मेरी राय में तो इस खण्ड को रखने में कोई भी औचित्य नहीं है। माननीय मित्र त्यागी ने जो संशोधन रखा उसका मैं हार्दिक समर्थन करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, संविधान के मसौदे में यह भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण खण्ड है जिस पर हम अभी विचार कर रहे हैं। इसका पहला अंश नमक कर के सम्बन्ध में है। माननीय मित्र श्री त्यागी ने इस खण्ड को हटाने का एक संशोधन रखा है। मैं सविनय उनके संशोधन का विरोध करता हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि इस खण्ड को मसौदे में पहले रखा क्यों गया और अब इसे हटाया क्यों जा रहा है? क्या यह बात है कि महात्मा जी जब मौजूद थे तो हमने उनके लिये यह खण्ड रख दिया था पर अब हमारे बीच नहीं रह गये हैं इसलिये इसे हटा देते हैं? वस्तुत: में यह देख रहा हूं कि मसौदा-समिति ने इस संशोधन को खुद अपने आप न पेश करके श्री त्यागी के द्वारा इसे उपस्थित कराया है। त्यागी जी ने तथा अन्य मित्रों ने यहां यह कहा है कि इस खण्ड को हटाने का मतलब यह नहीं है कि हम नमक पर कर लगाना चाहते हैं। इनका कहना यह है कि इस खण्ड को वह केवल इसलिये हटाना चाहते है कि भावी संसदों का हाथ न बंधा रहे। इनका कहना है कि इस संशोधन का विरोध केवल भावुकता के आधार पर किया जा रहा है। मेरी अपनी अनुभूति यह है कि राष्ट्र के जीवन में भावुकता का भी बड़ा महत्व है। हमारे स्वातन्त्र्य संग्राम के इतिहास में नमक को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। अपने स्वातन्त्र्य संग्राम में नमक आन्दोलन का जो महत्वपूर्ण कृतित्व है उसके स्मारक के रूप में यदि हम इस खण्ड को संविधान में स्थान देते हैं तो मेरे ख्याल से ऐसा करने से कोई क्षति नहीं है। इसलिये इस खण्ड को हटाने के मैं जबरदस्त खिलाफ हूं। यह कहना कि अगर यह खण्ड संविधान में रहता है तो इससे भावी संसदों का हाथ बंध जायेगा, सर्वथा निरर्थक है। अगर आगे चलकर ऐसा ही मौका आता है जबकि नमक पर कर लगाना जरूरी हो जाये तो संसद् संविधान में भी परिवर्तन कर सकती है। पर आप यह चाहते हैं कि पहले तो इस खण्ड को हटा दिया जाये और फिर संसद में यह कहा जाये, 'हमें आय की आवश्यकता

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

है इसलिये नमक पर कर लगना ही चाहिये'। आखिर यह द्रविड़ प्राणायाम क्यों? केवल भावुकता सम्बन्धी कारणों से ही मैं इस खण्ड को हटाने पर आपत्ति नहीं कर रहा हूं। बल्कि प्रधानतः आर्थिक कारणों से इसे हटाने का विरोध कर रहा हूं। गरीब से गरीब आदमी को भी नमक कर देना पड़ता है और यही कारण था जो महात्मा जी यह चाहते थे कि गरीब व्यक्ति के नमक पर कर न लगना चाहिये। इसी सिद्धान्त पर नमक सत्याग्रह का महान् आन्दोलन चलाया गया था। मेरा ख्याल है कि इस खण्ड को हटाने का मतलब यह होता है कि हम उन सभी तर्कों को जिनको कि नमक सत्याग्रह के दिनों में पेश किया करते थे, और जिनके लिए हमने इतनी कुर्बानियां की, अब हम नहीं मानते हैं। इसलिये मैं इस अनुच्छेद से इस खण्ड को हटाने के जबरदस्त खिलाफ हूं। इस खण्ड को हटाना, राष्ट्रीय भावनाओं पर अत्याचार करना होगा, अपने स्वातन्त्र्य संग्राम के इतिहास के साथ अन्याय करना होगा।

जहां तक कि अनुच्छेद के दूसरे भाग का सम्बन्ध है जो उत्पादन शुल्क के बारे में है, मेरा ख्याल है कि माननीय मित्र श्री बारदोलोई तथा रेवरेण्ड निकल्स राय ने अपने पक्ष के प्रतिपादन में प्रबल तर्क उपस्थित किये हैं। आप लोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि अर्थ वितरण की जो वर्तमान व्यवस्था है वह सर्वथा एक असन्तुलित व्यवस्था है। वस्तुतः यहां यह जानकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ है कि आसाम प्रान्त से चाय पर उत्पादन शुल्क के रूप में 6 करोड़ और आयात कर के रूप में चार करोड़ की आमदनी केन्द्र को होती है। इसी तरह आसाम से 2 करोड़ की आय उसे पेट्रोल पर उत्पादन शुल्क के जरिये होती है। इस तरह केवल इन दो वस्तुओं से केन्द्र को आसाम प्रान्त से 12 करोड़ की आमदनी हो जाती है और सहायता के रूप में प्रान्त को वह देता है सिर्फ तीस लाख रुपये। मेरा ख्याल है कि एक सीमावर्ती प्रान्त के साथ, जिसकी आवश्यकताओं पर हमें सर्वोपरि ध्यान देना चाहिये। ऐसा व्यवहार न होना चाहिये। अर्थ वितरण की जो वर्तमान व्यवस्था है उसमें जरूर संशोधन होना चाहिये और आसाम को, उस बृहत राजस्व से जो कि हम आसाम जनित वस्तुओं के द्वारा प्राप्त करते हैं, कुछ न कुछ अंश हमें जरूर उस प्रान्त को देना चाहिये। श्री बारदोलोई ने डेढ़ करोड़ की मांग बजट की कमी को पूरा करने के लिए की है और ढाई करोड़ मांगा है विकास विषयक योजनाओं के लिए। उनकी मांग का मैं समर्थन करता हूं और मेरा यह ख्याल है। आसाम को आर्थिक मदद हमें अवश्य देनी चाहिये ताकि वह हमारा सीमाप्रान्त बनने के लिए सर्वथा सक्षम रहे।

इस सम्बन्ध में अब मैं एक दूसरा सैद्धांतिक प्रश्न यहां उठाना चाहता हूं। वह प्रश्न यह है कि उत्पादन शुल्क के वितरण का जो सवाल है वह केवल आसाम से ही सम्बन्ध नहीं रखता है। चीनी पर उत्पादन शुल्क के रूप में संयुक्त प्रान्त 6 करोड़ देता है। इस सम्बन्ध में एक ऐसी प्रणाली बरती जानी चाहिये जिसके अनुसार सभी प्रान्तों को अपने-अपने अंशदान से कुछ न कुछ हिस्सा जरूर मिल सके। मैं यह महसूस करता हूं। कि इन करों के द्वारा प्राप्त आय के वितरण की जो वर्तमान व्यवस्था है वह उचित नहीं है।

आगे का खण्ड पटसन के निर्यात शुल्क के बारे में है पटसन पर निर्यात शुल्क के जरिये जो आय केन्द्र को होती है उसमें से कई करोड़ की रकम हमें

कुछ प्रान्तों को हिस्से के रूप में दे देनी पड़ती है। इसलिए मैं समझता हूं कि हमें इन सभी खंडों पर पुनर्विचार करना चाहिये। अर्थ वितरण के लिए हमें कोई न कोई एक तर्क संगत प्रणाली अपनानी चाहिये। मेरा यह सुझाव है कि आय कर, उत्पादन शुल्क वगैरह से जो आमदनी हो उसकी एक राशि बना लेनी चाहिये और उसमें से केन्द्र की आवश्यकता के अनुसार रकम निकालने पर जो शेष बचे वह सभी प्रान्तों को, प्रथमतः तो उनकी आवश्यकता फिर उनकी पिछड़ी हुई अवस्था, आबादी आय संग्रह आदि बातों का ख्याल रखते हुये समान अनुपात से वितरित कर देना चाहिये। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुये वह रकम प्रान्तों में बंटनी चाहिये ताकि अनुपाततः सबको समान अंश मिल सके।

ऐसा होने पर ही प्रान्तों की शासन व्यवस्था सुचारू रूप से चल सकती है। सर ओटो नेमर के निर्णय की हर व्यक्ति ने निन्दा की है फिर भी इसी निर्णय के अनुसार आज अर्थ का वितरण हो रहा है और आगे भी होता रहेगा। हां आगे चलकर प्रस्तावित वित्त-आयोग की सिफारिशों के आधार पर वर्तमान व्यवस्था में संशोधन जरूर किया जायेगा पर अभी दो तीन साल तक—और ये दो तीन साल राष्ट्र के लिये बड़े ही संकट के होंगे—हमें वर्तमान व्यवस्था के अधीन ही चलना होगा। मैं महसूस करता हूं कि यह प्रश्न बड़ा ही महत्व का है, और इसमें विलम्ब न होना चाहिये। केन्द्र भी आर्थिक दृष्टि से खूब सुदृढ़ होना चाहिये केन्द्र के भार के सम्बन्ध में पण्डित कुंजरू ने जो बातें कही हैं उन्हें भी हमने ध्यान से सुना है। इन सभी बातों का हमें ख्याल करना होगा और संविधान के लागू होते ही हमें अर्थ-वितरण की एक समुचित व्यवस्था चालू कर देनी चाहिये। यह कहने से काम नहीं चलेगा कि वित्त-आयोग की रिपोर्ट आने पर, तदनुसार इस सम्बन्ध में हम परिवर्तन कर देंगे। संविधान के इस भाग पर हमें विचार करना ही होगा और प्रान्त तथा केन्द्र के बीच अर्थ वितरण के लिये एक समुचित प्रणाली हमें अपनानी ही होगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अब इस मसले पर राय ले ली जानी चाहिये।

***श्री आर.के सिधवाः** पर श्री त्यागी ने जो संशोधन पेश किया है उस पर तो अभी विचार ही नहीं हो पाया है।

***अध्यक्षः** इस संशोधन पर यहां विचार किया गया है। करीब चार या पांच सदस्य इस खण्ड पर बोल चुके हैं

प्रस्ताव यह है:–

"कि इस मसले पर अब मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** डॉ. अम्बेडकर आप कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्री त्यागी के संशोधन को स्वीकार करने पर मैं राजी हूं। मेरा ख्याल है कि मेरे लिए यह आवश्यक है कि मसौदा-समिति की ओर से मैं यह बता दूं क्यों इस संशोधन को वह स्वीकार करना चाहती है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

बजाय इसके कि आरम्भ में ही मैं उन प्रमुख बातों का यहां उल्लेख करूं जिनके आधार पर इसके संशोधन को मंजूर करना सर्वथा समुचित है, माननीय मित्र प्रो. सक्सेना ने मसौदा-समिति के विरुद्ध जो बातें कही हैं पहले मैं उनका ही जवाब दे देना चाहता हूं।

प्रो. सक्सेना का कहना है कि मसौदा-समिति ने पहले तो इस खण्ड (1) को संविधान में स्थान दे दिया और अब वह श्री त्यागी के संशोधन को मानने पर तैयार हो गई है। उसके लिये, ऐसा करना उचित नहीं है। मैं यह बताना चाहता हूं कि जिस खण्ड (1) को मसौदा-समिति ने रखा है उसकी उत्पत्ति मसौदा-समिति की बैठकों में नहीं हुई है। अगर मेरी याद ठीक है तो इस खण्ड का सुझाव संघ-शक्ति समिति (Union Powers Committee) ने अपनी रिपोर्ट में दिया था; इस कमेटी में यह तय हुआ था कि नमक पर कोई कर न लगना चाहिये। चूंकि मसौदा-समिति यूनियन पावर्स कमेटी की रिपोर्ट में दिये हुये आदेशों और सिद्धान्तों के अनुसार चलने के लिए बाध्य थी, उसके पास सिवाय इसके और कोई रास्ता नहीं था कि वह इस कमेटी के नमक कर सम्बन्धी सुझाव को इस अनुच्छेद में स्थान देती। इसलिये वस्तुतः बात यह नहीं है कि मसौदा-समिति अपने विचारों में अव्यवस्थित रही है।

अब मैं उन व्यावहारिक कठिनाइयों को लेता हूं जो इस खण्ड के रहने से उत्पन्न हो सकती है। सभा को याद होगा कि सूची 1 में दो प्रविष्टियां हैं, एक तो प्रविष्टि नं. 86 जिसके अनुसार केन्द्रीय सरकार उत्पादन शुल्क का आरोपण कर सकती है, दूसरी प्रविष्ट है नं. 85 की जिसके अनुसार केन्द्रीय शासन बहिशुल्क का आरोपण कर सकता है। अब अगर यह खण्ड (1) संविधान में रहता है तो यह स्पष्ट है कि केन्द्रीय शासन को यह अधिकार न रहेगा कि नमक पर उत्पादन शुल्क और बहिशुल्क आरोपित करने के लिए वह इन प्रविष्टियों का प्रयोग कर सके। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है क्योंकि इस खण्ड से नमक पर शुल्क आरोपित करने के लिए विधि निर्माण की शक्ति छिन जाती है और इस खण्ड के न रहने पर नमक पर शुल्क इन प्रविष्टियों के अधीन लगाया जा सकता है। सोचा यह गया कि प्रविष्टि 86 के द्वारा नमक पर उत्पादन शुल्क की जो शक्ति प्राप्त है उसका अगर प्रयोग न भी किया जा सका तो देश को इससे कुछ अधिक कठिनाई न होगी। पर प्रविष्टि 85 के अधीन बहिशुल्क लगाने का जो अधिकार प्राप्त है उस पर अगर कोई प्रतिबन्ध लगता है तो देश को बड़ी कठिनाई होगी क्योंकि इससे यह होगा विदेश से नमक मंगाने की स्वतन्त्रता हो जायेगी और सरकार नमक की जबरदस्त आमद को रोकने के लिये कोई कानून न बना सकेगी। इसका परिणाम यह हो सकता है कि देश का नमक उद्योग बिल्कुल मर जाये। इसलिये महसूस यह किया गया कि अच्छा होगा कि इस प्रतिबन्ध को हटा दिया जाये और इस प्रश्न को भावी संसदों पर छोड़ दिया जाये ताकि वह तत्कालीन स्थिति के अनुसार जैसा ठीक समझा करें। यही कारण है जो मसौदा-समिति श्री त्यागी के संशोधन को स्वीकार करने पर राजी है।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या मैं जान सकता हूं कि निदेशक सिद्धान्तों में फिर मद्य निषेध की बात क्यों रखी गई? अगर इस खण्ड (1) को हटाना है तो मैं

पूछता हूं कि शासन के निदेशक सिद्धान्तों में मद्य निषेध को क्यों रखा गया और मूल-अधिकारों में कृपया धारण करने का अधिकार क्यों समाविष्ट किया गया है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** कृपाण धारण के अधिकार की बात इससे बिल्कुल भिन्न है।

***अध्यक्ष:** संशोधनों पर मत लेने से पूर्व चन्द शब्द मैं श्री त्यागी के संशोधन के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं। इस संशोधन के सम्बन्ध में मसौदा-समिति का जो रुख है उससे मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ है। देश की गरीब जनता को तो कितने कर देने पड़ते थे पर जब महात्मा जी ने सत्याग्रह का आन्दोलन शुरू किया तो उन्होंने आन्दोलन के लिए नमक कर सम्बन्धी प्रश्न को ही लिया और उनका ऐसा करना अकारण नहीं था। उन्होंने नमक कर को इसलिये लिया था कि वह यह महसूस करते थे कि गरीब से गरीब भिखारी को भी, जिसे कि एक ही शाम खाने को मिल पाता है, नमक कर का अपना अंश चुकाना पड़ता है और यही कारण था कि जब उन्होंने नमक कर के विरुद्ध सत्याग्रह की अपील की तो प्राय: सारे देश को उनकी अपील जच गई। उस समय कुछ ऐसे भी लोग थे जो यह महसूस करते थे कि उनका सत्याग्रह सफल न होगा क्योंकि आन्दोलन के लिये उन्होंने ऐसे कर को चुना है जिसमें नाम मात्र भी रकम लोगों को देनी पड़ती है। पर उनके आन्दोलन का नतीजा क्या हुआ इसे हम सभी जानते हैं। तीन सप्ताह के अन्दर ही देश इस छोर से उस छोर तक सर्वत्र वह आन्दोलन चल पड़ा और कोई ही ऐसा ग्राम या स्थान रहा हो जहां नमक कानून की अवज्ञा न की गई हो।

मैं कहता हूं कि आज भी अगर आप नमक पर कर लगाते हैं तो उसी तरह के आन्दोलन का आपको सामना करना पड़ जायेगा जिसने कि सारे देश को हिला दिया था। इसलिये मैं सभा को यह सुझाव दूंगा कि वह इस बात पर विचार करे कि अपने स्वातन्त्र्य संग्राम के स्मारक के रूप में इस खण्ड को हमें संविधान में स्थान देना चाहिये या नहीं। मैं सभा को यह राय दूंगा– और खूब सोच विचार कर यह राय दे रहा हूं—कि उसे श्री त्यागी के संशोधन को अस्वीकार करना चाहिये। पर सदस्यों को हक है जैसा चाहें इसका फैसला करें।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): रस्मी तौर पर मैं यह संशोधन रखता हूं कि इस संशोधन पर विचार स्थगित रखा जाये।

***अध्यक्ष:** मेरा ख्याल है कि अच्छा यह होगा कि मैं इस संशोधन पर राय ले लूं।

***श्री महावीर त्यागी:** आपकी अनुमति हो श्रीमान्, तो मैं सवाल करूं। *(माननीय सदस्य बीच में बोल उठे कि कोई सवाल नहीं किया जा सकता है)* क्या आपका यह ख्याल है कि इस खण्ड (1) के हटने से नमक पर पुन: कर लगा दिया जायेगा?

***अध्यक्ष:** इस खण्ड के हट जाने पर नमक कर के लिए दरवाजा खुल जाता है। और हमारी जो वर्तमान आर्थिक कठिनाइयां हैं उनमें, मुझे इसका यकीन नहीं है कि इसका लाभ उठाकर नमक पर कर लगाया ही न जायेगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): इस खण्ड में न केवल उत्पादन शुल्क के आरोपण का निषेध है बल्कि इसके अनुसार बाहर से आये नमक पर आयात शुल्क भी नहीं लगाया जा सकता है। यही कारण है जो हम लोग इसे हटाना चाहते हैं। अगर यह खण्ड रहता है तो भारत सरकार नमक पर किसी तरह का कोई कर लगा ही नहीं सकती है।

***कई सदस्य:** अब कोई भाषण न होना चाहिये।

***अध्यक्ष:** अब कोई सदस्य वक्तृता न दें। अगर सदस्यों की इच्छा हो तो मैं इस अनुच्छेद पर राय न लूं ताकि इस पर और विचार किया जा सके।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इस अनुच्छेद को अभी स्थगित रखा जा सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इस अनुच्छेद को अभी स्थगित रखा जा सकता है।

***श्री महावीर त्यागी:** हां, इस अनुच्छेद को अभी हम स्थगित रख सकते हैं।

***अध्यक्ष:** तो यह अनुच्छेद अभी स्थगित रखा जाता है। अब सभा सोमवार के मध्याह्न 3 बजे तक के लिए स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा सोमवार 8 अगस्त सन् 1949 ई.
के मध्याह्न 3 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।